Website : www.sainsrijanpatal.com

साईं सृजन पटल

मासिक ई-पत्रिका

लेखन और सृजन के उन्नयन के लिए सदैव प्रतिबद्ध

MSME Registration No.
UDYAM-UK-05-0103926

वर्ष-3 | अंक-21 | अप्रैल - 2026 | पृष्ठ-32 | निःशुल्क

संदेश

मैं अत्यंत प्रसन्नता और गर्व के साथ यह अभिव्यक्त करता हूँ कि 'साईं सृजन पटल' पत्रिका सामाजिक सरोकारों एवं मानवीय मूल्यों को समर्पित अपने सारगर्भित, सुसंस्कृत लेखन के माध्यम से पाठकों को निरंतर समृद्ध कर रही है। इसके प्रत्येक अंक का पाठकों को बेसब्री से इंतजार रहता है तथा इसकी संपादकीय दृष्टि समाज को नई दिशा प्रदान कर रही है। कविता, कहानी, शोध, संस्कृति, स्वास्थ्य एवं विविध विषयों पर आधारित सामग्री इसे अत्यंत रोचक और ज्ञानवर्धक बनाती है। भाषा की शुद्धता एवं विषय की गहराई इस पत्रिका की विशिष्ट पहचान है, जो इसे समय का एक महत्वपूर्ण दस्तावेज भी बनाती है।

संपादक प्रो. (डॉ.) के. एल. तलवाड़ महोदय जी, उप संपादक अंकित तिवारी जी एवं समस्त संपादकीय मंडल का योगदान अत्यंत प्रशंसनीय है। विशेषतः प्रो. तलवाड़ और अंकित तिवारी जी की संवेदनशील एवं प्रभावशाली लेखनी उनके व्यक्तित्व की सरलता और परोपकारिता को दर्शाती है। मैं पत्रिका के उज्ज्वल भविष्य की कामना करते हुए समस्त संपादकीय मंडल एवं पाठकों को हार्दिक बधाई एवं धन्यवाद प्रेषित करता हूँ। आशा है कि 'साईं सृजन पटल' निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर रहे।

डॉ. नंद लाल भारती
(अंतर्राष्ट्रीय जनजातीय लोक कलाकार)

डॉ. नन्दलाल भारती अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त जनजातीय लोक कलाकार

संपादकीय

साईं सृजन पटल का 21वां अंक प्रबुद्ध पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करते हुए अत्यंत हर्ष का अनुभव हो रहा है। इस अंक में साहित्यकार डॉ.भारती मिश्रा के लेख में उत्तराखंड में देव जात्राओं के पौराणिक महत्व पर विस्तृत चर्चा और चिंता दोनों का समावेश है। पर्यटन से जुड़े लेख 'पर्वत श्रृंखला पंचाचूली' और गंगोत्री नेशनल पार्क' भी पाठकों की नजर हैं। अनेक मंचों पर सम्मानित निकिता रावत की भोजपत्र से जुड़ी कलाकारी को भी इस अंक में जगह दी गई है। देहरादून में आयोजित 'दून पुस्तक महोत्सव' के साथ ही 'साहित्य गौरव सम्मान समारोह' से पाठकों को परिचित करवाया गया है। मॉडल वैष्णवी लोहनी को 'मिस टैलेंटेड', रीना शाह को अंतर्राष्ट्रीय सेमिनार में 'प्रथम स्थान', प्रो.अंजु बाली पांडे को शैक्षिक अनुसंधान में 'उत्कृष्टता पुरस्कार', पतंजलि अनुसंधान संस्थान को दूसरी बार 'राष्ट्रीय पुरस्कार' और मानवाधिकार पर बनी डाक्यूमेंट्री फिल्म 'सेकंड चांस' को राष्ट्रीय पुरस्कार मिलना उत्तराखंड के लिए गौरव के समाचार हैं, जिन्हें इस अंक में संकलित किया गया है। लैंटाना,नीलमणि लता और कचनार पर लेख भी नई जानकारियां दे रहे हैं। बद्रीनाथ राजमार्ग पर कमेडा में भूस्खलन के स्थायी वैज्ञानिक उपचार की जानकारी भी उपलब्ध करवाई गई है। गढ़वाली भाषा में लेख भी पाठकों को पसंद आयेगा। ट्रैफिक कर्मी जोगेंद्र कुमार की कार्यशैली भी सराहनीय है। अंतर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त जनजातीय कलाकार डॉ. नंद लाल भारती जी ने भी पत्रिका के स्वरूप का मूल्यांकन कर हमारी हौसलाअफजाई की है।

प्रो. (डॉ.) के. एल. तलवाड़

साईं
सृजन पटल
मासिक ई-पत्रिका

संपादक/स्वामी/प्रकाशक
प्रो.के.एल.तलवाड़
(सेवानिवृत्त प्राचार्य)
मो.- 9412142822
ई-मेल: sainsrijanpatal@gmail.com
वेबसाईट - sainsrijanpatal.com

उप संपादक
अंकित तिवारी
एम.ए., एल.एल.बी.
मो. 7678117638

सह संपादक
अमन तलवाड़
मो. 7300883189
द्वारा ईजी ग्राफिक्स,
दया पैलेस, हरिद्वार रोड,देहरादून (उत्तराखंड)
से मुद्रित करवाकर 'साईं कुटीर'
आर.के.पुरम, जोगीवाला, देहरादून
(उत्तराखंड) से प्रकाशित

सलाहकार मंडल
डॉ.एस.डी. जोशी, वरिष्ठ फिजिशियन
प्रो. जानकी पंवार (सेवानिवृत्त प्राचार्य)
प्रो. राजेश कुमार उभान (सेवानिवृत्त प्राचार्य)
डॉ० अनूप वीरेन्द्र कठैत (लेखक/अभिनेता)
डॉ. चन्द्रभूषण बिजल्वाण साहित्यकार

आवरण पृष्ठ

पृष्ठभूमि में टाइगर फॉल (चकराता), इन्सेट में - मॉडल वैष्णवी लोहनी (मिस टैलेंटेड उत्तराखंड 2026),भोजपत्र कलाकार निकिता रावत, दून पुस्तक महोत्सव-2026 की प्रतिकृति एवं नीलमणि लता।

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में तथ्यों संबंधी विचार लेखकों के निजी हैं, जिनसे प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

काशीपुर का चैती मेला : आस्था व इतिहास का समागम

उत्तराखण्ड राज्य अपनी परम्पराओं व आस्था के प्रतीक, त्यौहारों के कारण अपनी अलग पहचान बनाए हुए है। यहाँ के रीति रिवाज, परम्परा, मेले, खान–पान, नृत्य, संगीत व कला ने सदा से ही सभी को आकर्षित किया है । नए वर्ष के आगमन के साथ ही उत्तराखण्ड में त्यौहारों की रौनक शुरू हो जाती है । चैती मेला राज्य का प्रसिद्ध मेला है, जिसका आयोजन उधमसिंह नगर जिले में काशीपुर में प्रतिवर्ष चैत्र मास की नवरात्रि से आयोजित किया जाता है, जो कि लगभग 15 दिनों तक चलता है। जिस स्थान

पर मेले का आयोजन किया जाता है वह एक धार्मिक एवं पौराणिक रूप से ऐतिहासिक स्थान है। काशीपुर में कुँडेश्वरी मार्ग पर स्थित यह स्थान महाभारत से भी सम्बन्धित रहा है और यहीं बालासुन्दरी देवी का मन्दिर है, जो कि इक्यावन शक्तिपीठों में से एक माना गया है। मान्यताओं के अनुसार माता सती की दायीं भुजा इसी स्थान पर गिरी थी। जिस कारण यहां पर माता की कोई मूर्ति नहीं है, बल्कि एक शिला पर उनकी दायीं भुजा की आकृति गढ़ी हुई है और उसी की पूजा की जाती है।

माता बालासुन्दरी के अतिरिक्त यहाँ शिव मंदिर, बृजपुर वाली देवी, भगवती ललिता मंदिर, भैरव व काली के मंदिर भी हैं। कहा जाता है कि ब्राह्मण परिवारों को स्थानीय चंद राजाओं से यह भूमि दानस्वरूप प्राप्त हुई थी, तो एक स्थाई मंदिर पक्काकोट मोहल्ले में अग्निहोत्री ब्राह्मणों के क्षेत्र में बनाया गया। बाद में इस भूमि पर बालासुन्दरी देवी का मन्दिर स्थापित किया गया। लोक मान्यतानुसार मुगलों ने इस स्थान पर माँ बालासुन्दरी के इस मन्दिर की स्थापना की थी। इसीलिए इस मंदिर और यहां लगने वाले मेले का एक प्राचीन इतिहास है। मंदिर परिसर में स्थित पाकड़ का एक पेड़ स्थित है, इसकी विशेषता यह है कि जिसका तना और पतली टहनी तक सब खोखला है। मां बालासुंदरी के ऐतिहासिक चैती मेले की एक प्रमुख विशेषता घोड़ों की खरीद–फरोख्त भी है, जिससे नखासा मेला कहा जाता है। कहा जाता है कि चैती मेला में नखासा मेला करीब चार सौ साल पहले रामपुर निवासी घोड़ों के बड़े व्यापारी हुसैन बख्श ने शुरू किया था। इस मेले से कभी चंबल के डाकू भी अपनी पसंद का घोड़ा खरीदकर ले जाते थे। आज भी मेले के दौरान घोड़ों का व्यापार किया जाता है। काशीपुर का चैती मेला आस्था, विश्वास, इतिहास और व्यापार का अनूठा संगम है, जो कि डाकुओं की दास्तान से लेकर देवी माँ के प्रति आस्था के साथ आज भी अपनी परम्परा का निर्वाह कर रहा है।

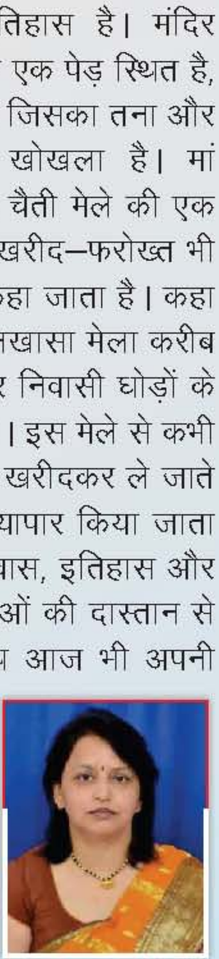

प्रस्तुति : डॉ. विनीता चौधरी
एसोसिएट प्रोफेसर,
डी.डब्लू.टी.कॉलेज, देहरादून

उपलब्धि

श्रीदेव सुमन उत्तराखंड विश्वविद्यालय की शोध छात्रा रीना शाह ने अंतरराष्ट्रीय सेमिनार जयपुर में पाया प्रथम स्थान

विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में एक उल्लेखनीय उपलब्धि हासिल करते हुए उत्तराखंड की प्रतिभाशाली शोधार्थी रीना शाह ने अंतरराष्ट्रीय स्तर के सेमिनार में प्रथम पुरस्कार प्राप्त कर अपने राज्य और संस्थान का नाम गर्व से ऊँचा किया है। यह उपलब्धि उन्होंने Biotech Innovations 2026 : From Discovery to Translation विषय पर आयोजित

अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन में अपने उत्कृष्ट शोध प्रस्तुतीकरण के माध्यम से हासिल की। यह प्रतिष्ठित सम्मेलन 26 से 28 मार्च 2026 तक राजस्थान के जयपुर स्थित Suresh Gyan Vihar University में आयोजित किया गया। इस सम्मेलन का आयोजन विश्वविद्यालय के बायोटेक्नोलॉजी विभाग तथा बायोटेक्नोलॉजी बिजनेस इन्क्यूबेटर एवं स्कूल ऑफ एप्लाइड साइंसेज द्वारा किया गया था। कार्यक्रम को भारत सरकार के जैव प्रौद्योगिकी विभाग (Department of Biotechnology) और DST राजस्थान द्वारा प्रायोजित किया गया था, जिससे इसकी महत्ता और भी बढ़ गई। इस अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन में देश–विदेश से आए अनेक वैज्ञानिकों, शोधार्थियों और शिक्षाविदों ने भाग लिया। सम्मेलन का मुख्य उद्देश्य जैव प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हो रहे नवीनतम अनुसंधानों, तकनीकी नवाचारों और उनके व्यावहारिक अनुप्रयोगों पर विचार–विमर्श करना था। तीन दिवसीय इस आयोजन में विभिन्न विषयों पर व्याख्यान, शोध–पत्र प्रस्तुतियां, पोस्टर प्रेजेंटेशन और पैनल चर्चाएं आयोजित की गई। रीना शाह , जो कि उत्तराखंड के श्रीदेव सुमन उत्तराखंड विश्वविद्यालय की शोध छात्रा है, इस सम्मेलन में Exploring Phytochemical Richness and

Antimicrobial Efficacy of Invasive Alien Species in Western Himalaya विषय पर अपना शोध प्रस्तुत किया। उनके शोध का मुख्य फोकस पश्चिमी हिमालय क्षेत्र में पाई जाने वाली आक्रामक विदेशी वनस्पतियों के फाइटोकेमिकल गुणों और उनके जीवाणुरोधी प्रभावों का अध्ययन था। रीना का यह शोध अत्यंत महत्वपूर्ण माना गया क्योंकि इसमें उन्होंने उन पौधों के औषधीय गुणों को उजागर किया है जिन्हें सामान्यतः हानिकारक या अनुपयोगी माना जाता है। उनके अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ कि ये आक्रामक प्रजातियां न केवल पर्यावरणीय संतुलन को प्रभावित करती हैं, बल्कि इनमें कई ऐसे रासायनिक तत्व भी पाए जाते हैं जो भविष्य में औषधि निर्माण में उपयोगी हो सकते हैं। इस प्रकार उनका शोध पर्यावरण संरक्षण और चिकित्सा विज्ञान दोनों क्षेत्रों के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो सकता है। सम्मेलन के दौरान निर्णायकों के पैनल ने विभिन्न मापदंडों जैसे विषय की नवीनता, शोध की गुणवत्ता, प्रस्तुतीकरण की स्पष्टता और सामाजिक उपयोगिता के आधार पर प्रतिभागियों का मूल्यांकन किया। इन सभी मानकों पर रीना का प्रदर्शन उत्कृष्ट रहा, जिसके परिणामस्वरूप उन्हें प्रथम पुरस्कार से सम्मानित किया गया। सम्मेलन के समापन समारोह में रीना को Certificate of Achievement प्रदान किया गया। इस अवसर पर आयोजकों ने रीना की सराहना करते हुए कहा कि उनका शोध कार्य आने वाले समय में जैव प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में नई दिशा प्रदान कर सकता है।

रीना ने अपनी इस उपलब्धि का श्रेय अपने माता–पिता ओर अपने मार्गदर्शक गुरु प्रो. गुलशन कुमार ढींगरा को देते हुए कहा कि उनके मार्गदर्शन और प्रोत्साहन के बिना ये उपलब्धि सम्भव नही थी, जिससे उन्हें इस मुकाम तक पहुंचने में मदद मिली। उत्तराखंड जैसे पर्वतीय राज्य से आकर अंतरराष्ट्रीय मंच पर इस प्रकार की सफलता प्राप्त करना निश्चित रूप से अन्य युवाओं के लिए प्रेरणादायक है। रीना की यह उपलब्धि न केवल व्यक्तिगत सफलता है, बल्कि यह पूरे उत्तराखंड के लिए गर्व का विषय है। साईं सृजन पटल की ओर से रीना शाह को इस उपलब्धि के लिए अनेकानेक शुभकामनाएं।

प्रस्तुति : प्रो. (डॉ.)के.एल. तलवाड़

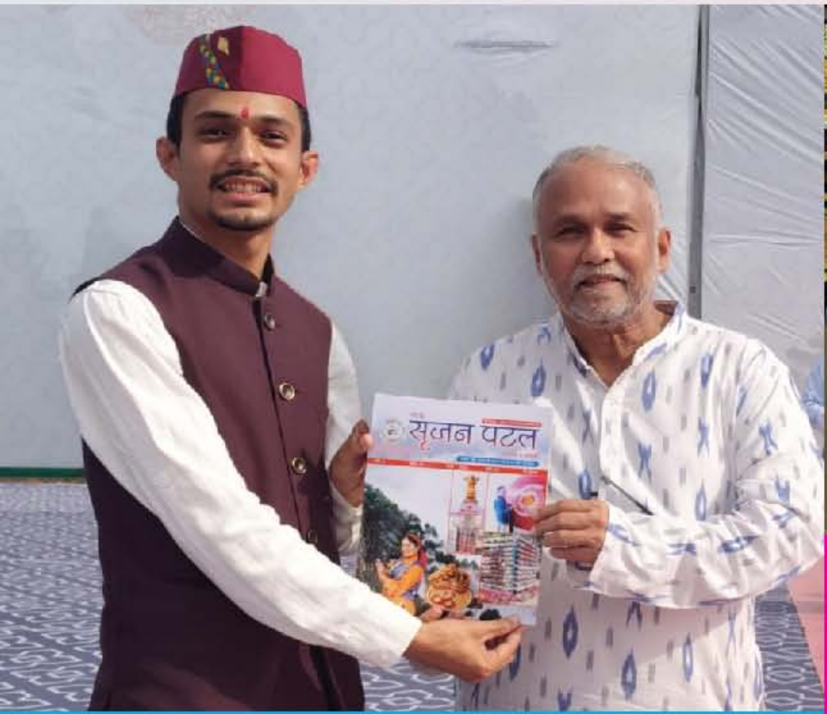

देहरादून के परेड ग्राउंड में आयोजित 'दून बुक फेस्टिवल' (4–12 अप्रैल) में नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया(NBT) के अध्यक्ष प्रो.मिलिंद सुधाकर मराठे को 'साईं सृजन पटल' के उप संपादक अंकित तिवारी द्वारा पत्रिका का मार्च अंक भेंट किया गया। **5 अप्रैल 2026**

'फेमिना मिस इंडिया उत्तराखंड 2026 प्रतियोगिता' की 'मिस टैलेंटेड – वैष्णवी लोहनी' को 'साईं सृजन पटल' परिवार ने स्मृति चिन्ह देकर सम्मानित किया।

25 मार्च 2026

पंचाचूली : हिमालय की गोद में आस्था इतिहास और अदम्य साहस की अमर गाथा

हिमालय केवल पर्वतों की श्रृंखला नहीं, बल्कि भारत की आत्मा, आस्था और संस्कृति का जीवंत स्वरूप है। इसी हिमालयी चेतना का एक विराट, भव्य और रहस्यमय प्रतीक है पंचाचूली पर्वत श्रृंखला। उत्तराखंड के कुमाऊँ अंचल में स्थित यह हिमशिखर समूह प्रकृति की अनुपम कारीगरी, पौराणिक विश्वास और आधुनिक पर्वतारोहण इतिहास–तीनों का अद्भुत संगम प्रस्तुत करता है।

हिमालय का दिव्य सौंदर्य : प्रकृति की अनुपम कृति

पंचाचूली वास्तव में पाँच हिमाच्छादित पर्वत चोटियों का समूह है, जिनकी ऊँचाई समुद्रतल से 6,312 मीटर से लेकर 6,904 मीटर तक है। **इन्हें पंचाचूली– I से पंचाचूली– V तक नाम दिया गया है।** कुमाऊँ के सुरम्य पर्वतीय क्षेत्र में स्थित मुनस्यारी, चौकोड़ी और आसपास के गाँवों से जब ये पाँचों शिखर सूर्य की किरणों से आलोकित होकर दिखाई देते हैं, तो दृश्य ऐसा प्रतीत होता है मानो स्वर्ग स्वयं धरती पर उतर आया हो। चारों ओर फैली बर्फीली घाटियाँ, गहरी खाइयाँ और बदलता मौसम इस क्षेत्र को जितना सुंदर बनाते हैं, उतना ही चुनौतीपूर्ण भी। यही कारण है कि पंचाचूली हिमालय प्रेमियों, प्रकृति शोधकर्ताओं और पर्वतारोहियों के लिए आकर्षण का केंद्र रही है।

पौराणिक आधार : जहाँ इतिहास आस्था बन जाता है

पंचाचूली नाम अपने आप में गहरी पौराणिक भावना समेटे हुए है। 'पंच' अर्थात पाँच और 'चूली' अर्थात चूल्हा या भोजन पकाने का स्थान। लोकमान्यता के अनुसार महाभारत काल में पांडव युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव–अपने राज्य का सफल संचालन करने के पश्चात जब स्वर्गारोहण हेतु हिमालय की ओर अग्रसर हुए, तब उन्होंने यहीं अंतिम बार भोजन तैयार किया था। कहा जाता है कि पाँचों पांडवों ने इन पाँच शिखरों पर अलग–अलग चूल्हे जलाए थे। इसी कारण यह क्षेत्र "पांडवों के पाँच चूल्हे" अर्थात पंचाचूली कहलाया। धार्मिक ग्रंथों में इसे पंचशिरा नाम से भी जाना जाता है। स्थानीय शौका समुदाय इसे अत्यंत पवित्र मानता है और अपने लोकगीतों में इसे दरमान्योली के नाम से संबोधित करता है। इस प्रकार पंचाचूली केवल भौगोलिक संरचना नहीं, बल्कि लोकसंस्कृति और जन आस्था का केंद्र है।

पर्वतारोहण का स्वर्णिम इतिहास : साहस की सर्वोच्च परीक्षा

पंचाचूली पर्वत श्रृंखला भारतीय पर्वतारोहण इतिहास में भी मील का पत्थर मानी जाती है। दुर्गम भूभाग, अत्यधिक ऊँचाई, भीषण ठंड और अचानक आने वाले हिमस्खलन इन सबके बावजूद यहाँ विजय प्राप्त करना मानवीय साहस की पराकाष्ठा है।

- **पंचाचूली–I** (6,355 मीटर) पर पहली सफल चढ़ाई वर्ष

1972 में भारतीय तिब्बत सीमा पुलिस के जवानों ने की। इस ऐतिहासिक अभियान का नेतृत्व मेजर हुकुम सिंह ने किया और उत्तरी बालटी हिमनद मार्ग को अपनाया गया।

- **पंचाचूली–II** (6,904 मीटर), जो इस श्रृंखला की सर्वोच्च चोटी है, 1973 में ITBP के ही एक अन्य दल द्वारा महेंद्र सिंह के नेतृत्व में फतह की गई।
- **पंचाचूली–III** (6,312 मीटर) पर 2001 में दक्षिण पूर्वी रिज के माध्यम से विजय प्राप्त की गई।
- पंचाचूली–**IV** (6,334 मीटर) पर 1995 में न्यूजीलैंड के पर्वतारोहियों ने सफलता प्राप्त की।
- **पंचाचूली–V** (6,437 मीटर) पर 1992 में इंडो–ब्रिटिश टीम ने दक्षिण रिज से पहली बार कदम रखा।
- इन अभियानों ने न केवल पंचाचूली की भौगोलिक जटिलताओं को उजागर किया, बल्कि भारतीय पर्वतारोहण की क्षमता को भी अंतरराष्ट्रीय पहचान दिलाई।

- **जोखिम, संघर्ष और बलिदान**
- पंचाचूली क्षेत्र जितना सुंदर है, उतना ही खतरनाक भी। यहाँ बार–बार बर्फीले तूफान और हिमस्खलन आते हैं। सितंबर 2003 में ITBP के नौ जवान एक भीषण एवलांच की चपेट में आ गए। यह घटना हमें याद दिलाती है कि हिमालय के प्रति सम्मान, संयम और सतर्कता अत्यंत आवश्यक है।
- **सांस्कृतिक, पर्यटन और पहचान का केंद्र**
- आज पंचाचूली कुमाऊँ की पहचान बन चुकी है। यह क्षेत्र पर्यटन, ट्रैकिंग और शोध के लिए महत्वपूर्ण है, परंतु इसके साथ–साथ यह भी आवश्यक है कि विकास और संरक्षण के बीच संतुलन बना रहे। पंचाचूली की पवित्रता, पर्यावरण और सांस्कृतिक विरासत को सुरक्षित रखना हम सभी का दायित्व है।
- **पंचाचूली : केवल पर्वत नहीं, एक चेतना**
- पंचाचूली पर्वत श्रृंखला हिमालय की उन दुर्लभ धरोहरों में से है, जहाँ पौराणिक आस्था, ऐतिहासिक सत्य और आधुनिक साहस एक साथ सांस लेते हैं। यह हमें सिखाती है कि ऊँचाइयाँ केवल भौतिक नहीं होती–आस्था की ऊँचाई, साहस की ऊँचाई और संस्कृति की ऊँचाई ही किसी राष्ट्र को महान बनाती है। पंचाचूली आज भी मौन खड़ी होकर मानव को आमंत्रित करती है। आओ, प्रकृति का सम्मान करो, इतिहास को समझो और साहस के साथ आगे बढ़ो।

प्रस्तुति : अंकित तिवारी, उप संपादक

कचनार (ग्वीराल) से बनायें स्वादिष्ट सब्जी व अचार

चैत्र–वैशाख का महीना हो और उत्तराखंड के पहाड़ी क्षेत्रों में सैर करते–करते कचनार के फूल दिख जाएं तो दृष्टि वहीं पर स्थिर हो जाती है। जी हां ! कचनार जिसे गढ़वाली में ग्वीराल या क्वीराल *(Bauhinia Variegata)* भी कहते हैं। उत्तराखंड के जंगलों में पाया जाने वाला कचनार अपनी सुंदरता व औषधीय गुणों के लिए जाना जाता है। गढ़वाल में यह मध्यम ऊँचाई वाले क्षेत्रों (लगभग 500 से 1500 मीटर) में प्रचुरता से पाया जाता है। इसके फूल गुलाबी,सफेद या हल्के बैंगनी रंग के होते हैं, जो बसंत ऋतु (फरवरी से अप्रैल) के दौरान पूरी घाटी को रंगों से भर देते हैं। किसी समय में यह पहाड़ी खान–पान का अभिन्न हिस्सा रहा है। पहाड़ों में कचनार की सब्जी रायता व अचार बनाया जाता है। इसकी कलियों की सब्जी बहुत ही स्वादिष्ट एवं लाभकारी होती है। इसकी कलियों को हल्का उबालकर, उनका कसैलापन निकालकर जख्या का तड़का लगाकर जो सब्जी बनती है, वह स्वाद और सेहत दोनों में लाजवाब होती है। कलियों को उबालकर दही अथवा छांछ के साथ मिलकर रायता भी बनाया जाता है। कचनार की कलियों को यदि लंबे समय तक उपयोग करना है तो अचार सबसे बेहतरीन विकल्प है। यह पाचन के लिए भी बहुत लाभकारी है। इसका औषधीय महत्व भी है। इसकी छाल का काढ़ा बनाकर पीने से शरीर में गांठ का उपचार होता है। खून को साफ करने में मदद करता है। पहाड़ी ढलानों पर कचनार की जड़ें भू– संरक्षण का काम भी करती हैं। इसकी पत्तियां पशु के चारों के काम आती हैं।

गढ़वाली लोक गीतों और कविताओं में अक्सर बसंत के वर्णन में 'क्वीराल' के खिलने का जिक्र मिलता है। यह बुरांश के साथ मिलकर पहाड़ की सुंदरता में चार चाँद लगा देता है।

गढ़वाली कविताओं में 'क्वीराल' के फूलों का खिलना यौवन और प्रकृति के श्रृंगार का प्रतीक माना गया है। जैसे बुरांश ऊँचाइयों का राजा है, वैसे ही निचली और मध्यम पहाड़ियों की ढलानों पर क्वीराल बसंत की घोषणा करता है।

क्वीराल की कलियों की सब्जी बनाने की विधि

आवश्यक सामग्री –

- क्वीराल की कलियां – 250–500 ग्राम (बंद कलियां सबसे अच्छी होती हैं, खिले हुए फूल कम लें)
- तड़का – जख्या या जीरा
- मसाले –हल्दी,धनिया पाउडर, लाल मिर्च, नमक (स्वादानुसार)
- अन्य – बारीक कटा प्याज, लहसुन, अदरक और हरी मिर्च
- तेल – सरसों का तेल (सबसे उत्तम स्वाद के लिए)

बनाने की विधि –

1. कलियों की सफाई और तैयारी –

सबसे पहले कचनार की कलियों को अच्छे से धो लें। इनके डंठल हटा दें। यदि कुछ फूल खिल गए हैं, तो उनकी पंखुड़ियाँ अलग कर लें और बीच का कड़ा हिस्सा हटा दें।

एक बर्तन में पानी उबालें और उसमें थोड़ा सा नमक डालें। अब इन कलियों को 5–7 मिनट तक उबालें जब तक कि वे नरम न हो जाएं। उबालने के बाद पानी को छानकर फेंक दें। ऐसा करने से कचनार का प्राकृतिक कसैलापन निकल जाता है। अब कलियों को ठंडे पानी से धोकर हल्का सा निचोड़ लें। एक कड़ाही में सरसों का तेल गरम करें। धुआं उठने पर इसमें जख्या (या जीरा) डालें। इसके बाद बारीक कटा हुआ लहसुन और अदरक डालकर सुनहरा होने तक भूनें। अब इसमें कटा हुआ प्याज और हरी मिर्च डालें। जब प्याज हल्का गुलाबी हो जाए, तो हल्दी, धनिया पाउडर और मिर्च डालें। थोड़ा सा पानी डालकर मसालों को अच्छी तरह पकाएं। अब उबली हुई कचनार की कलियां कड़ाही में डालें। ऊपर से स्वादानुसार नमक डालें। इसे मसालों के साथ अच्छी तरह मिलाएं। कड़ाही को ढक्कन से ढक दें और धीमी आंच पर 5–10 मिनट तक पकने दें। बीच–बीच में चलाते रहें ताकि सब्जी नीचे न लगे। जब कलियां मसालों का स्वाद सोख लें और सब्जी सूखी व कुरकुरी हो जाए, तब गैस बंद कर दें। गढ़वाल में इस सब्जी को मंडुवे की रोटी या गरमा–गरम चावल के साथ खाया जाता है। यदि आप इसे थोड़ा और स्वादिष्ट बनाना चाहती हैं, तो सब्जी पकाते समय इसमें एक चम्मच दही डालें। इससे बचा हुआ कसैलापन भी खत्म हो जाता है और स्वाद बहुत निखर कर आता है।

प्रस्तुति: डॉ० शोभा रावत
असिस्टेंट प्रोफेसर
राजकीय महाविद्यालय,
कल्जीखाल, पौड़ी गढ़वाल

कविता

पहाड़ की स्त्रियां

पहाड़ की छाती पर
थाती बोती स्त्रियां,
युगों–युगों तक याद की जाएंगी।
घाव पर फूंक का
मरहम लगाती,
फिर–फिर दोहराई जाएंगी
पहाड़ की स्त्रियां।
भर नहीं देती
जब तक दिगंत,
अपने श्रम के रंगों से
स्वर्णिम से रक्ताभ, रक्ताभ से स्वर्णिम के बीच,
कई रंग आजमाएंगी
पसीने की धार से चेहरा चमकाएंगी
अपना लोहा मनवायेंगी
पहाड़ की स्त्रियां।
अरुणोदय से पहले
जग जाएंगी,
पीछे घर को मीठी नींद में सोता छोड़
आंचल में ममता
और बगल में
पाइडल–जड़ा (रस्सी)
और उसी के बीच हरा नमक लगी रोटी दबाये,
बोंड (जंगल) निकल जाएंगी
पहाड़ की स्त्रियां।
चरवाहा बन
गोरू डंगर के लिए
खूब हरी घास
और चूल्हे के लिए आग,
पीठ पर उठा लाएंगी–
देखना–
एक दिन
पहाड़ की स्त्रियां–
खुद पहाड़ बन जाएंगी!

प्रस्तुति: अनिता मैठाणी

देवभूमि

उत्तराखण्ड में तीर्थाटन, देव जात्राओं का पौराणिक महत्व व संरक्षण का व्यावहारिक स्वरूप

वैदिक काल से लेकर पौराणिक युग और लोक परंपराओं तक हिमालय को ऋषियों, देवताओं और सिद्धों की तपोभूमि माना गया है और इसी हिमालय में प्राचीन काल से ही उत्तराखण्ड स्थित है, जिसे देवभूमि की संज्ञा दी गई है। इस देवभूमि का प्रत्येक पर्वत, गांव, नदी किसी न किसी पौराणिक आख्यान, ऋषि परंपरा और देव कथा से जुड़ा हुआ है। यहां के पर्वत केवल शैल रचनाएं नहीं हैं बल्कि यह देवताओं के निवास स्थल माने गए हैं।

यहां की नदियां केवल जलधारा नहीं अपितु मोक्ष और जीवन प्रदान करने वाली मातृशक्ति के रूप में पूजी जाती हैं। इस प्रकार उत्तराखंड धार्मिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक अर्थों से जुड़ा रहा है। उत्तराखण्ड मे केवल जीवित सांस्कृतिक परंपरा ही नहीं बल्कि यहां तीर्थाटन और देव जात्राएं लोकजीवन, आस्था और सामाजिक संरचना का अभिन्न अंग रहे हैं। यहां तीर्थाटन केवल मोक्ष प्राप्ति के लिए नहीं किया जाता बल्कि तीर्थाटन का मुख्य उद्देश्य समाज, प्रकृति और आत्मा के बीच संतुलन स्थापित करना रहा है।

यहां पर नन्दा देवी राजजात यात्रा, पांडव नृत्य, जागर, छोलिया आदि के साथ जुड़ी देव डोलिया लोकदेवताओं और पौराणिक चेतना को जीवित रखने का कार्य करती हैं। आज जब तीर्थाटन पर्यटन और बाजार का विशेष केन्द्र बन गया है, तब इसके संरक्षण का व्यावहारिक स्वरूप एक गंभीर विमर्श के रूप में सामने आता है।

उत्तराखंड में तीर्थाटन की पौराणिक परंपरा

हिमालय को तपस्या और ज्ञान की भूमि के रूप में ऋग्वेद और उपनिषदों में वर्णित किया गया है। शिव का

निवास स्थल हिमालय और गंगा को मोक्षदायिनी कहा गया है। स्कंद पुराण के केदारखंड और मानसखंड में उत्तराखण्ड को शिव और शक्ति की साधना का प्रमुख केन्द्र माना गया है।। हमारे प्राचीन पुराणों के अनुसार नारायण की तपोभूमि बद्रीनाथ क्षेत्र, महादेव का ज्योतिर्लिंग स्थल केदारनाथ, गंगा का उद्गम स्थल गंगोत्री और यमुना का शक्तिपीठ यमुनोत्री को माना गया है। इन चारों धामों को आदि शंकराचार्य द्वारा व्यवस्थित चार धाम यात्रा के रूप में प्रतिष्ठा मिली है, जिसने उत्तराखंड को भारतीय तीर्थ मानचित्र पर स्थापित किया है। इस देवभूमि में पंच केदार के साथ भी पौराणिक कथा जुड़ी हुई है। महाभारत की कथा के अनुसार अपने पापों के प्रायश्चित के लिए पांडव का शिव की खोज में जाना और अंततः पंच केदार में शिव के विभिन्न अंगों का केदारनाथ, तुंगनाथ, रुद्रनाथ, मदमहेश्वर और कल्पेश्वर के रूप में प्रकट होना इस बात का प्रतीक है कि यहां तीर्थ केवल पूजा का स्थल नहीं बल्कि आत्मशुद्धि और नैतिक उत्तरदायित्व का स्मरण भी कराता है। इसी प्रकार पंचप्रयाग विष्णुप्रयाग, नंदप्रयाग, कर्णप्रयाग, रुद्रप्रयाग और देवप्रयाग नदियों के संगम के माध्यम से प्रकृति और अध्यात्म के अद्वितीय समन्वय को भी देखा जा सकता है।

देव जात्राएं लोक और पुराण का संगम

उत्तराखण्ड की देव जात्राएं इस क्षेत्र की सांस्कृतिक आत्मा का जीवंत स्वरूप हैं, जिसमें सबसे विशिष्ट और विराट देवयात्रा नन्दा देवी राजजात यात्रा मानी जाती है, जो 12 वर्ष में एक बार आयोजित होती है। यह यात्रा नन्दा देवी अर्थात् पार्वती के मायके से ससुराल तक की प्रतीकात्मक विदाई यात्रा है। इस यात्रा के द्वारा यह पता चलता है कि उत्तराखंड की आस्था केवल मंदिर केंद्रित नहीं बल्कि परिदृश्य केंद्रित है क्योंकि इस यात्रा में स्कंदपुराण और लोक कथाओं का समन्वय, ग्राम देवताओं की सहभागिता, कठिन हिमालय मार्गों पर सामूहिक यात्रा की भावना देखने को मिलती है। उत्तराखण्ड के ग्रामों में देवता स्थिर न होकर गतिशील हैं। यहाँ पर देव डोलिया गांव–गांव भ्रमण करती हैं। देवता केवल पूज्य नहीं बल्कि नैतिक संरक्षक माने जाते है। यह देवजात्राएं जाति, वर्ग और आर्थिक भेद भाव से ऊपर उठकर सामूहिक सहभागिता को बढ़ावा देती हैं। जागर परंपरा के माध्यम से मनुष्यों और देवताओं के बीच संवाद स्थापित होता है जो इस देवभूमि की लोकधार्मिक चेतना की विशिष्ट पहचान हैं। इनके द्वारा लोकगीत, जागर, नृत्य और व्रत परंपराएं पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होते रहते हैं साथ ही स्थानीय लोगों के लिए ये आजीविका का स्रोत भी रही हैं।

समकालीन चुनौतियां

वर्तमान समय में उत्तराखण्ड का तीर्थाटन तीव्र व्यवसायीकरण और पर्यटन के दबाव से गुजर रहा है। एक तरफ जहां सड़कों, होटलों और हेलीकॉप्टर सेवाओं ने पहुंच को आसान बनाया वहीं दूसरी तरफ कचरा प्रबंधन की समस्या, पर्यावरणीय दबाव, स्थानीय संस्कृति का क्षरण जैसी चुनौतियां भी बढ़ने लगी हैं। जहां पहले तीर्थयात्री स्थानीय संसाधनों पर निर्भर रहकर पैदल यात्रा करता था, वहीं आज तीर्थ शीघ्र उपभोग की वस्तु में बदलता जा रहा है। इससे न केवल आध्यात्मिक गरिमा प्रभावित होती है बल्कि स्थानीय समाज की भूमिका भी समाप्त होती जा रही है। आज एक प्रमुख चुनौती के रूप में पर्यावरण असंतुलन भी दृष्टिगोचर होता है। चूंकि हिमालय एक अत्यंत संवेदनशील क्षेत्र है जिसकी वहन क्षमता सीमित है और बढ़ते दबाव के कारण अनियंत्रित निर्माण, वनों की कटाई, सड़क विस्तार जैसी समस्याएं बढ़ती जा रही हैं जो कि हिमालय को क्षति पहुंचाने का काम कर रहे हैं। केदारनाथ आपदा जैसी घटनाएं यह स्पष्ट संकेत देती हैं कि यदि धार्मिक आस्था को पर्यावरणीय विवेक से नहीं जोड़ा जाता तो भविष्य में इसके परिणाम और भी अधिक विनाशकारी हो

सकते हैं। देवजात्राओं का सांस्कृतिक सरलीकरण और मंचीयकरण भी समकालीन चुनौतियों के रूप में महत्त्वपूर्ण है। देवजात्राएं कई स्थलों पर अब केवल इवेंट बनती जा रही हैं। जिनका मूल, धार्मिक और सामाजिक स्वरूप समाप्त होता जा रहा है। इसका एक मुख्य कारण युवा पीढ़ी का परंपरागत ज्ञान से कटाव भी माना जा सकता है, जो कि चिंता का विषय है। स्थानीय समुदाय के निर्णय प्रक्रिया से दूरी भी एक अन्य गंभीर समस्या के रूप में मुखर होती है। तीर्थ और देवस्थल जो परंपरागत रूप से ग्राम समाज और मंदिर समितियों द्वारा संचालित होते थे, अब बाहरी ठेकेदारों और प्रशासनिक तंत्र के अधीन होते जा रहे हैं जिसके कारण स्थानीय लोगों की संस्कृति के प्रति आस्था और उत्तरदायित्व की भावना भी कमजोर होती जा रही है। आधुनिक शिक्षा, शहरी पलायन और रोजगार की बाधाओं के कारण आज का युवा वर्ग अपनी पारंपरिक देवकथाओं लोकगीतों और संस्कृति से धीरे–धीरे विमुख होता जा रहा है। इसके अतिरिक्त प्रशासनिक प्रबंधन और धार्मिक आस्था के बीच असंतुलन भी एक मुख्य कारण के रूप में सामने आता है। कई बार तीर्थ प्रबंधन में प्रशासनिक निर्णय धार्मिक संवेदनशीलता स्थानीय परंपराओं के अनुरूप नहीं होते जिससे समाज में तनाव पैदा होने का संकट रहता है। तीर्थ स्थलों को केवल संख्या और राजस्व के आंकड़े की प्रवृत्ति इसकी संस्कृति को भारी क्षति पहुंचाती है। इन सभी चुनौतियों का मुख्य कारण है कि उत्तराखंड के तीर्थाटन और देवताओं को समग्र सांस्कृतिक परंपरा के रूप में देखने के बजाय उन्हें अलग–अलग धार्मिक पर्यटन या प्रशासनिक खांचों में बांटकर देखा जा रहा है। जब तक सभी के बीच संतुलित दृष्टिकोण विकसित नहीं किया जाएगा, तब तक देवभूमि की अनूठी विरासत गंभीर संकट में बनी रहेगी।

संरक्षण का व्यावहारिक स्वरूप

परंपराएं तभी तक जीवित रहती हैं जब तक वे केवल स्मृति न होकर जीवन पद्धति बनी रहती है और उत्तराखण्ड की देव जात्राएं भी इसी सिद्धांत पर आधारित हैं। यह अतीत की स्थिर धरोहर नहीं बल्कि निरंतर चलने वाली सांस्कृतिक प्रक्रिया है और इसलिए इनके संरक्षण का अर्थ इन्हें संग्रहालय में सुरक्षित कर देना नहीं बल्कि इस प्रकार से सहेजना है कि बदलते समय के साथ इनकी आत्मा पौराणिक चेतना और सामाजिक भूमिका अक्षुण बने रहे। संरक्षण का प्रथम और सबसे महत्त्वपूर्ण आधार सामुदायिक केंद्रित दृष्टिकोण होना चाहिए। यहां की देवजात्राएं और तीर्थाटन प्राचीन समय से ही मंदिर समितियों, ग्राम समाज और लोक पुरोहितों द्वारा संचालित होते रहे हैं। अतः संरक्षण

की किसी भी योजना में स्थानीय समुदाय को केवल सहभागी नहीं बल्कि नेतृत्वकर्ता की भूमिका में रखा जाना चाहिए क्योंकि जब समुदाय स्वयं परम्पराओं का संरक्षक बनता है तब संरक्षण किसी बाहरी दबाव के बजाय आंतरिक उत्तरदायित्व बन जाता है। साथ ही हिमालय क्षेत्र की वहन क्षमता को देखते हुए तीर्थाटन और देवजात्राओं की योजना बनाना अत्यंत अनिवार्य हो जाता है। चारधाम यात्रा जैसे बड़े आयोजनों में श्रद्धालुओं की संख्या का वैज्ञानिक निर्धारण, वैकल्पिक रास्तों का विकास और मौसम पर आधारित नियमन पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने में सहायक हो सकता है। यदि हम समय रहते अपनी लोककथाओं, देवगाथाएं, जागर और पारंपरिक अनुष्ठानों को लिपिबद्ध और डिजिटल रूप में संरक्षित कर लेते हैं तो इनके लुप्त होने का खतरा भी समाप्त हो जाएगा। जिसके लिए विश्वविद्यालय, शोध संसाधनों और स्थानीय सांस्कृतिक संगठनों के सहयोग से इसको संरक्षित किया जा सकता है। साथ ही विद्यालयों और उच्च शिक्षण संस्थानों में अपनी संस्कृति और परम्पराओं को पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाकर युवा पीढ़ी को अपनी संस्कृति से जोड़ा जा सकता है।

वर्तमान समय में आधुनिक सुविधाएं और सुरक्षा व्यवस्थाएं अत्यंत आवश्यक हैं किंतु उनका स्वरूप ऐसा होना चाहिए कि वे परंपरा को विस्थापित न करें। मंदिरों, यात्रा मार्गों पर निर्माण कार्य स्थानीय स्थापत्य शैली और सांस्कृतिक प्रतीकों के रूप में होना चाहिए। तकनीक का उपयोग सुविधा के लिए किया जाए न कि धार्मिक अनुभव को सतही बनाने के लिए। जब तक तीर्थाटन और देवजात्राओं को केवल संख्या, लाभ और दृश्य आकर्षण की दृष्टि से देखा जाएगा तब तक संरक्षण अधूरा रहेगा। संरक्षण तभी सार्थक होगा जब आस्था प्रकृति और समाज के बीच पारंपरिक संबंधों को एक केन्द्र में लाया जाए।

देवभूमि की देवजात्राएं और तीर्थाटन केवल धार्मिक आस्था की अभिव्यक्ति नहीं है बल्कि वह भारतीय सभ्यता की उस संस्कृति का प्रतिनिधित्व करती हैं, जिसमें प्रकृति, समाज और अध्यात्म एक अविभाज्य इकाई के रूप में देखे जाते हैं। यहां पर पौराणिक स्मृति, लोक विश्वास और सामूहिक अनुभव एक साथ प्रवाहित होते हैं। पौराणिक ग्रंथों में वर्णित मानसखंड और केदारखंड से लेकर लोकदेवताओं की कथाओं तक उत्तराखण्ड की धार्मिक परंपरा ने मनुष्य को प्रकृति का स्वामी नहीं, उसका सहभागी माना है। यहां पर तीर्थ करना केवल मोक्ष प्राप्ति नहीं बल्कि आत्मसंयम, तप, सामाजिक उत्तरदायित्व भी रहा है और यहां की यात्राएं इसी उद्देश्य को और अधिक व्यापक बनाती हैं। आज जब तीर्थाटन और देवजात्रा तीव्र गति से पर्यटन बाजार और उपभोग की संस्कृति से प्रभावित हो रही हैं तब ये संकट पूर्ण रूप से स्पष्ट दिखाई देता है कि कहीं यह परम्पराएं अपनी आत्मा न खो दें। आज आवश्यकता यह है कि उत्तराखंड के तीर्थाटन और देवजात्राओ को केवल धार्मिक अनुष्ठान नहीं बल्कि इनके पौराणिक महत्व को समझते हुए व्यावहारिक, सामुदायिक और संवेदनशील संरक्षण नीतियां अपनाई जाए ताकि देवभूमि की अमूल्य सांस्कृतिक विरासत आने वाली पीढ़ियों तक सुरक्षित रह सके।

अंततः हमें यह पूर्ण रूप से स्वीकार करना होगा कि उत्तराखण्ड की तीर्थ परंपराएं और देवजात्राएं अतीत की जड़ स्मृतियां नहीं बल्कि वर्तमान में सांस लेती हुई सांस्कृतिक प्रक्रियाएं हैं। यदि हम इन्हें केवल आर्थिक संसाधन या सांस्कृतिक प्रदर्शन के रूप में देखेंगे तो इनकी जीवंतता समाप्त हो जाएगी लेकिन अगर इन्हें समझा और सहेजा जाएगा तो यह उत्तराखंड की पहचान के रूप में बनी रहेंगी। देवभूमि की विरासत तभी सुरक्षित रहेंगी जब संरक्षण को कर्तव्य नहीं बल्कि सांस्कृतिक साधना के रूप में स्वीकार किया जाएगा।

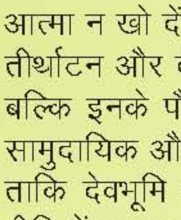

प्रस्तुति–
डॉ. भारती मिश्रा अजबपुर, देहरादून

फेमिना मिस इंडिया 2026 उत्तराखंड-मिस टैलेंटेड

'संस्कृति, साधना और सफलता का संगम'

वैष्णवी लोह्नी

देहरादून में आयोजित फेमिना मिस इंडिया उत्तराखंड-2026 के ग्रैंड फिनाले में 'मिस टैलेंटेड' का खिताब जीतकर वैष्णवी लोह्नी ने न केवल अपनी प्रतिभा का परचम लहराया, बल्कि भारतीय संस्कृति की सुंदर अभिव्यक्ति के माध्यम से सभी को मंत्रमुग्ध कर दिया। योग और नृत्य के अनूठे संगम से उन्होंने यह साबित किया कि आधुनिक मंच पर भी भारतीय परंपराओं की चमक उतनी ही प्रभावशाली है। इसी खास अवसर पर साईं सृजन पटल के उप संपादक अंकित तिवारी ने वैष्णवी लोह्नी से एक विस्तृत और आत्मीय बातचीत की। प्रस्तुत है, इस प्रेरणादायक संवाद के प्रमुख अंश :

प्रश्न: वैष्णवी, सबसे पहले 'मिस टैलेंटेड' बनने पर आपको बहुत–बहुत बधाई। इस उपलब्धि को आप कैसे देखती हैं ?

उत्तर: बहुत–बहुत धन्यवाद अंकित जी। यह मेरे लिए सिर्फ एक खिताब नहीं, बल्कि मेरी वर्षों की मेहनत, अनुशासन और विश्वास का परिणाम है। जब मंच पर मेरा नाम घोषित हुआ, वह पल मेरे जीवन का सबसे भावुक और गौरवपूर्ण क्षण था। मुझे लगा कि मेरी साधना और मेरी संस्कृति के प्रति प्रेम को एक पहचान मिली है।

प्रश्न: आपके टैलेंट राउंड की प्रस्तुति योग और नृत्य का संगम–काफी चर्चित रही। इसके पीछे की सोच क्या थी ?

उत्तर: मैं हमेशा से मानती हूँ कि योग केवल शारीरिक क्रिया नहीं, बल्कि आत्मा की अभिव्यक्ति है। जब मैंने इसे नृत्य के साथ जोड़ा, तो मेरा उद्देश्य था कि लोग इसे एक नई दृष्टि से देखें। "बम लहरी" जैसे आध्यात्मिक भजन पर प्रस्तुति देना मेरे लिए एक भावनात्मक अनुभव था जहाँ हर मूवमेंट में भक्ति और ऊर्जा दोनों थीं।

प्रश्न: इससे पहले भी आपने कई खिताब जीते हैं। क्या यह यात्रा आसान रही ?

उत्तर: बिल्कुल नहीं। हर सफलता के पीछे कई असफलताएं और संघर्ष छिपे होते हैं। मिस उत्तराखंड 2025 में फर्स्ट रनरअप बनने के बाद मैंने खुद पर और ज्यादा काम किया। मिस अल्मोड़ा, मिस फोटोजेनिक, मिस ब्यूटीफुल स्माइल जैसे खिताब मेरे लिए सीढ़ियाँ थे, जिन्होंने मुझे आगे बढ़ने का आत्मविश्वास दिया।

प्रश्न: एक प्रतियोगी के रूप में सबसे बड़ी चुनौती क्या रही ?

उत्तर: सबसे बड़ी चुनौती खुद को लगातार बेहतर बनाना है। इस क्षेत्र में केवल सुंदरता ही नहीं, बल्कि आत्मविश्वास, संचार कौशल, और मानसिक संतुलन भी जरूरी होता है। कई बार दबाव बहुत ज्यादा होता है, लेकिन मैंने हमेशा खुद को सकारात्मक बनाए रखा।

प्रश्न: आपने अपनी प्रस्तुति में भारतीय संस्कृति को प्रमुखता दी। आज के युवाओं के लिए आपका क्या संदेश है ?

उत्तर: मेरा मानना है कि हमारी जड़ें हमारी सबसे बड़ी ताकत हैं। अगर हम अपनी संस्कृति को समझें और उसे गर्व के साथ प्रस्तुत करें, तो हम वैश्विक मंच पर भी अलग पहचान बना सकते हैं। युवाओं को चाहिए कि वे आधुनिकता के साथ अपनी परंपराओं को भी अपनाएं।

प्रश्न: आपके इस सफर में परिवार और गुरुओं की क्या भूमिका रही ?

उत्तर: मेरे परिवार का समर्थन मेरे लिए सबसे बड़ी ताकत है। उन्होंने हर कदम पर मेरा हौसला बढ़ाया। मेरे गुरुओं ने मुझे केवल तकनीक ही नहीं, बल्कि अनुशासन और समर्पण भी सिखाया। मैं जो भी हूँ, उनके आशीर्वाद और मार्गदर्शन की वजह से हूँ।

प्रश्न: आगे के लिए आपके क्या लक्ष्य हैं ?

उत्तर: मैं राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर उत्तराखंड और भारत का प्रतिनिधित्व करना चाहती हूँ। इसके साथ ही

में योग और नृत्य के माध्यम से लोगों को स्वस्थ जीवनशैली और भारतीय संस्कृति के महत्त्व के प्रति जागरूक करना चाहती हूँ।

प्रश्नः साईं सृजन पटल द्वारा आपको सम्मानित किए जाने पर आपकी क्या प्रतिक्रिया है ?

उत्तरः यह मेरे लिए बहुत सम्मान की बात है। जब आपके अपने लोग आपकी उपलब्धियों को सराहते हैं, तो वह खुशी और भी खास हो जाती है। मैं साईं सृजन पटल परिवार की आभारी हूँ।

प्रश्नः अंत में, उन युवाओं के लिए क्या संदेश देंगी जो इस क्षेत्र में आना चाहते हैं ?

उत्तरः सपने देखिए, लेकिन उन्हें पूरा करने के लिए मेहनत और धैर्य भी रखिए। असफलताओं से डरिए मत, बल्कि उनसे सीखिए। सबसे जरूरी–अपने आप पर विश्वास बनाए रखिए।

वैष्णवी लोहनी की यह यात्रा केवल एक ब्यूटी पेजेंट की सफलता नहीं, बल्कि संस्कृति, साधना और आत्मविश्वास की प्रेरक कहानी है। उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि जब प्रतिभा के साथ संस्कार जुड़ते हैं, तो सफलता केवल व्यक्तिगत नहीं रहती, बल्कि समाज और संस्कृति के लिए भी गौरव का कारण बनती है।

उपलब्धि

प्रो.अंजु बाली पांडे शैक्षिक अनुसंधान में उत्कृष्टता पुरस्कार से सम्मानित

डीएवी पीजी कॉलेज देहरादून की इतिहास विषय की प्रोफेसर अंजु बाली पांडे को शैक्षिक अनुसंधान में उत्कृष्टता के लिए 'MIICCA लेजेंड एंटरप्राइज अवार्ड–2026 से सम्मानित किया गया। मिलेनियम इंडिया इंटरनेशनल चौंबर ऑफ कॉमर्स इंडस्ट्री एंड एग्रीकल्चर द्वारा यह सम्मान समारोह अशोका होटल नई दिल्ली में 9 अप्रैल को आयोजित

किया गया। सम्मान समारोह में उत्तराखंड के राज्यपाल, अनेक केन्द्रीय मंत्री व राजदूत और अर्जुन पुरस्कार विजेता उपस्थित थे। उल्लेखनीय है कि प्रो.अंजु बाली पांडे एक समर्पित शिक्षाविद हैं, जिन्हें शिक्षा और सामुदायिक विकास में उनके प्रभावशाली योगदान के लिए जाना जाता है। नार्थ अफ्रीकी देश ट्यूनीशिया पर शोध व पुस्तक लेखन के साथ ही वे अनेक पुरस्कारों से सम्मानित हो चुकी हैं।

उत्तराखंड रत्न, उत्तराखंड गौरव, नेशन बिल्डर अवार्ड, डेडिकेटेड टीचर एवं हिमालयी नारी शक्ति सम्मान आदि की प्राप्ति और राष्ट्रीय सेमिनारों का आयोजन उनकी शैक्षिक उत्कृष्टता को रेखांकित करता है। साईं सृजन पटल की ओर से उन्हें अनेकानेक शुभकामनाएं।

देहरादून में तैनात होमगार्ड जोगेन्द्र कुमार

नृत्य करते कदमों से व्यवस्था का संदेश

भारत जैसे विशाल और जनसंख्या बहुल देश में यातायात व्यवस्था को सुचारू बनाए रखना किसी चुनौती से कम नहीं है। धूल, धुआँ, शोर और लगातार बढ़ती वाहनों की संख्या के बीच ट्रैफिक पुलिस का कार्य अत्यंत कठिन और तनावपूर्ण होता है।

ऐसे में यदि कोई कर्मी अपने कर्तव्य को न केवल निभाए, बल्कि उसमें आनंद भी खोज ले, तो वह वास्तव में प्रेरणा का स्रोत बन जाता है। देहरादून में तैनात होमगार्ड जोगेंद्र कुमार इसी प्रेरणा के सजीव उदाहरण हैं। **वे ट्रैफिक को नियंत्रित करते हुए अपने अनोखे नृत्यपूर्ण अंदाज से लोगों का ध्यान आकर्षित करते हैं। हाथों के इशारों, सीटी की धुन और चेहरे की सहज मुस्कान के साथ वे वाहनों को दिशा देते हैं।** उनका यह अंदाज न केवल आकर्षक है, बल्कि आम लोगों के लिए एक सकारात्मक अनुभव भी बन जाता है। यह दृश्य हमें यह सोचने पर विवश करता है कि कार्य केवल जिम्मेदारी नहीं, बल्कि अभिव्यक्ति का माध्यम भी हो सकता है। जोगेंद्र कुमार ने अपने कार्य को बोझ न मानकर एक कला का रूप दे दिया है। यही कारण है कि लोग उनके समर्पण और ऊर्जा की सराहना कर रहे हैं। यह घटना यह भी दर्शाती है कि यदि कार्य के प्रति दृष्टिकोण सकारात्मक हो, तो कठिन से कठिन परिस्थितियाँ भी सहज लगने लगती हैं। यह पहला अवसर नहीं है जब किसी ट्रैफिक कर्मी ने अपने अनोखे अंदाज से लोगों का ध्यान आकर्षित किया हो।

इससे पहले भुवनेश्वर के प्रताप चंद्र खंडवाल और इंदौर के रंजीत सिंह भी अपने नृत्य के माध्यम से ट्रैफिक नियंत्रण के लिए प्रसिद्ध हो चुके हैं। इन उदाहरणों से यह स्पष्ट होता है कि नवाचार और रचनात्मकता हर क्षेत्र में संभव है, चाहे वह कितना ही अनुशासित और नियमबद्ध क्यों न हो।समाज के लिए यह एक महत्वपूर्ण संदेश है कि कार्य के प्रति प्रेम और समर्पण न केवल व्यक्तिगत संतुष्टि देता है, बल्कि दूसरों को भी प्रेरित करता है। जोगेंद्र कुमार जैसे कर्मी यह सिखाते हैं कि यदि हम अपने कार्य में आनंद खोज लें, तो वही कार्य हमारी पहचान बन सकता है। अंततः यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि ऐसे कर्मयोगी न केवल व्यवस्था को सुचारू बनाते हैं, बल्कि समाज में सकारात्मक ऊर्जा का संचार भी करते हैं।

प्रस्तुति : अंकित तिवारी
उपसंपादक

आयोजन

उत्तराखंड भाषा संस्थान
साहित्य गौरव सम्मान समारोह 2025

देहरादून स्थित मुख्य सेवक सदन में आयोजित उत्तराखण्ड भाषा संस्थान का "उत्तराखण्ड साहित्य गौरव सम्मान समारोह–2025" केवल एक औपचारिक कार्यक्रम नहीं, बल्कि राज्य की समृद्ध साहित्यिक परंपरा, सांस्कृतिक चेतना और रचनात्मक ऊर्जा का जीवंत उत्सव बनकर सामने आया। मुख्यमंत्री की उपस्थिति ने इस आयोजन को विशेष गरिमा प्रदान की। इस अवसर पर "उत्तराखण्ड साहित्य भूषण सम्मान" से डॉ. जितेन ठाकुर को सम्मानित किया जाना अत्यंत सार्थक निर्णय रहा। यह सम्मान न केवल एक साहित्यकार की व्यक्तिगत उपलब्धि का प्रतीक है, बल्कि पूरे हिंदी साहित्य जगत के लिए प्रेरणा का स्रोत भी है। इसी क्रम में डॉ. बुद्धिनाथ मिश्र, श्याम सिंह कुटौला, डॉ. प्रीतम सिंह, केसर सिंह राय और अताए साबिर अफजल मंगलौरी को "दीर्घकालीन उत्कृष्ट साहित्य सृजन पुरस्कार" से सम्मानित कर उनके दीर्घकालिक योगदान को मान्यता दी गई, जो नई पीढ़ी के रचनाकारों के लिए मार्गदर्शक है। साथ ही 'युवा कलमकार प्रतियोगिता' के विजेताओं को सम्मानित करना इस बात का संकेत है कि उत्तराखण्ड की साहित्यिक धारा निरंतर प्रवाहमान है और नई पीढ़ी इसमें सक्रिय भूमिका निभा रही है। 'साहित्य नारी वंदन सम्मान' के अंतर्गत प्रो. दिवा भट्ट, बाल साहित्य में प्रो. दिनेश चमोला, मौलिक रचना के लिए डॉ. भूपेंद्र बिष्ट, डॉ. सुधा जुगरान और शीशपाल गुसाई तथा कुमाऊँनी–गढ़वाली साहित्य के लिए तारा पाठक, हेमंत सिंह बिष्ट एवं गजेंद्र नौटियाल को सम्मानित किया जाना क्षेत्रीय भाषाओं और विविध साहित्यिक विधाओं के संरक्षण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

राज्य सरकार द्वारा साहित्य और संस्कृति के संरक्षण एवं संवर्धन के लिए किए जा रहे प्रयास सराहनीय हैं। ग्रंथ प्रकाशन हेतु अनुदान, विभिन्न पुरस्कार योजनाएं और विशेष रूप से 'साहित्य ग्राम' की स्थापना की पहल, साहित्यिक वातावरण को संस्थागत रूप देने की दिशा में महत्वपूर्ण है।

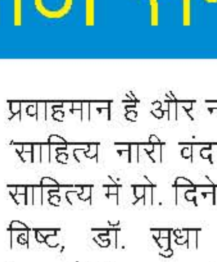

प्रस्तुति : श्रीमती नीलम तलवाड़

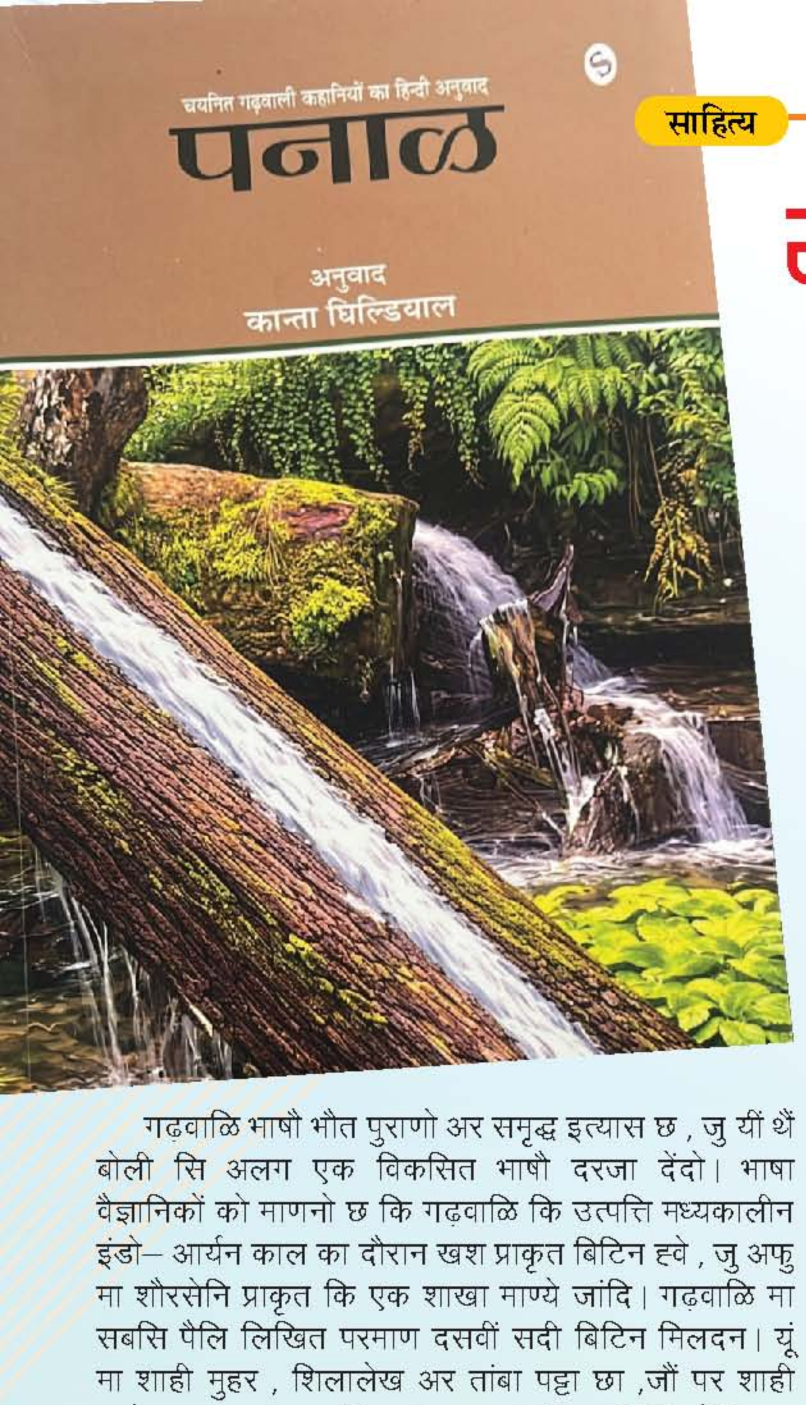

गढ़वाळि भाषा अर अनुवाद

गढ़वाळि भाषौ भौत पुराणो अर समृद्ध इत्यास छ , जु यीं थैं बोली सि अलग एक विकसित भाषौ दरजा देंदो। भाषा वैज्ञानिकों को माणनो छ कि गढ़वाळि कि उत्पत्ति मध्यकालीन इंडो– आर्यन काल का दौरान खश प्राकृत बिटिन ह्वे , जु अफु मा शौरसेनि प्राकृत कि एक शाखा माण्ये जांदि। गढ़वाळि मा सबसि पैलि लिखित परमाण दसवीं सदी बिटिन मिलदन। यूं मा शाही मुहर , शिलालेख अर तांबा पट्टा छा ,जौं पर शाही आदेश अर अनुदान लिख्यां छा। पंद्रवीं सदी सि पैलि का जागर , पंवाड़ा अर लोकगाथा जना साहित्य सि बि गढ़वाळि भाषा का पुराणा स्वरूप का बारा मा पता चलदो।

सतरवीं सदी मा पंवार वंग्स का राजों को राज छौ , जैमा वूंकि राजभाषा गढ़वाळि छै। हालांकि जादातर गढ़वाळि साहित्य पारंपरिक रूप सि मौखिक रूप मा संरक्षित रै जैको बाद मा एक लिखित साहित्यिक परम्परा का रूप मा विकास ह्वे अर अलग–अलग जगौं का भौगोलिक अर सांस्कृतिक असर कि वजै सि गढ़वाळि कि कैइ उपबोलि बि त्यार ह्वेन। गढ़वाळि भाषा अपणा सरल व्याकरण अर मयळा लोकसंगीत का दगड़ एक समै मा राजभाषा का रूप मा गैरा ऐतिहासिक महत्व का खातिर जण्ये जांदि। आज पलायन अर नगरीकरण का ये दौर मा नई पीढ़ी अपणि बोलि–भाषा सि दूर होणी छ , ज्यांसे गढ़वाळि का कै शब्द हर्चणा छन। यीं समस्या दगड़ निपटणा खातिर भाषा का संरक्षण अर संवर्धन का वास्ता अनुवाद भौत महत्वपूर्ण साधन छ। अनुवाद द्वारा गढ़वाळि साहित्य थैं विस्तार देये जै सकेंदो। कै बि भाषा का प्रचार–प्रसार अर उद्धार मा अनुवादै भूमिका भौत महत्वपूर्ण होंद। अलग–अलग भाषा साहित्यौ अपणी भाषा मा अनुवाद होंण सि अनुवादक का दगड़–दगड़ पढ़दरौं थैं बि नैं जानकारि , अनुभौ , विचार अर ऊर्जा मिलदि। यांका खातिर अनुवादक थैं मूल भाषा का दगड़ जैं भाषा मा अनुवाद होंण हो वांकि पूरि जानकारि होंण जरूरि छ। सौंगा शब्दों मा कै भाषा मा बोलीं या लिखीं बात थैं कै हैकि भाषा मा बोलण या लिखण थैं अनुवाद बोल्ये जांद , पर यु सिरफ शब्दों थैं एक भाषा बिटिन हैकि भाषा मा बदलणो को यांत्रिक काम नि होंद। यु अर्थ , विचार , भाव , ज्ञान , सभ्यता , संस्कृति अर संवेदना दगड़ छेड़छाड़ कर्यां बिना कै बात थैं अगनै पौंछौंणौ एक जरूरी अर औखो काम छ। अनुवादै सम्प्रेषण क्षमता अनुवाद करदरै कि अपणा ज्ञान व जानकारि अर चीजों कि पकड़ पर बि निर्भर करदि। कुल मिलैक बोल्ये जै सकेंद कि अनुवाद एक जगा , साहित्य , संस्कृति बिटिन हैकि जगै , साहित्य , संस्कृति का बिच पुळ को काम करदो। दुन्यै सब्बि भाषाओं मा अनुवादौ भौत बड़ो योगदान छ। येका माध्यम सि सिरफ दुन्यौ साहित्य समृद्ध नि होंद ह्वे , बल्कि यांमा रचनाधर्म कन्न सि समाज मा जागृति बि फैलदि। भाषा विज्ञान का संदर्भ मा अनुवाद का बारा मा विस्तार से पढ़ण पर पता चलदो कि जैं भाषा को अनुवाद होंद वा स्रोत भाषा अर ज्वा अनूदित भाषा होंद वीं थैं लक्ष्य भाषा बोल्ये जांद। गढ़वाली भाषा मा लिखित अनुवाद कि परंपरा काफि पुराणि छ। लगभग सन 1820 ईस्वी मा ईसाई मिशनरीन बाइबिलौ (न्यू टेस्टामेंट) गढ़वाळि अनुवाद करायि छौ। येका बाद सन 1876 मा अमेरिकी मिशनर्योंन 'गोस्पेल ऑफ मैथ्यु' को गढ़वाळि भाषा मा अनुवाद करवे। यूँ अनुवादों सि पता चलदो कि धार्मिक उद्देश्य सि अनुवाद को काम भौत पैलि शुरु

ह्वेगे छौ। राजा– माराजौंन बि अपणा शासनकाल मा गढ़वाळि भाषौ खूब प्रयोग करि। राजा सुदर्शन शाह सि ल्हेक नरेंद्र शाह का टैम तक राज–काज का काम गढ़वाळि भाषा मा ह्वे , जख मा एक तरौं सि अधिकारिक अनुवाद या क्षेत्रीय भाषौ प्रयोग देखणौ मिलदो। गढ़वाळि अपणा आप मा एक समृद्ध क्षेत्रीय भाषा छ। अनुवाद करदि बगत भाषै प्रकृति , वींका विकास अर आधुनिक उपयोग सि जुड़ीं कै समस्याओं सि द्वी चार होंण पड़दो , किलैकि गढ़वाळि जगा–जगा पर बदलेणि रौंदि। यांका अलौ प्रत्येक बोलि को अपणो अलग ढौळ होंद ज्यांसे मानक रूप मा अनुवाद कन्न कठिण ह्वे जांदो। अन्य भाषौं कि अपेक्षा गढ़वाळि कि आणा पखाणा वाळि शब्द–सम्पदा भौत विशिष्ट छ। भौत सारा गढ़वाळि शब्द छन जौंका पर्यायवाची शब्द हिंदी , अंग्रेजी या अन्य कै भाषौं मा मिलणो भौत मुश्किल होंद। गढ़वाळि भाषा बिटिन कै हैकि भाषा मा अनुवाद करदि बगत आणा , पखाणौ को विशेष ध्यान न रखे जावो त वे शब्द या वाक्यौ अर्थ पूरि तरौं सि बदलि जांद या खतमै ह्वे जांद। यांका अलौ आंचलिक , प्रकृति अर संस्कृति आधारित शब्दों कि बि अपणि एक अलग विशेषता छ। यि सब्बि शब्द गढ़वाळै संस्कृति अर भूगोल थैं व्यक्त करदन। यूंको सीधो सपाट अनुवाद कन्न मतलब मूल भाव खतम होंण। ये थैं सटीकता सि व्यक्त कन्ना खातिर भाषै गैरि समझ अर क्षेत्रीय बोल्यों को ज्ञान का दगड़ सांस्कृतिक अर साहित्यिक संवेदनशीलता होण भौत जरूरि छ।

अनुवादक थैं स्रोत अर लक्ष्य भाषौं को गैरि समझ होंण भौत जरूरि छ। येका दगड़ वेथैं अनुवाद होंण वळा विषया बारा मा बि पूरो ज्ञान होंण भौत आवश्यक छ , ज्यांसि सटीक , प्रमाणिक अर भावपूर्ण अनुवाद ह्वे साको। गढ़वाळि भाषा थैं अनुवाद का माध्यम सि वैश्विक पटल तक फैलास देणा खातिर पैलि बार हिंदी मा अनूदित पुस्तक पनाळ पाठकों का सामणि छ। उम्मीद छ कि जु लोग, खासकर युवा पीढ़ी अपणी संस्कृति, समाज अर लोकजीवन दगड़ जुड्या रौण चांदन पर गढ़वाळि बोलण–बच्याण मा परेशानि माणदन , वु जरूर यीं किताब पढीक अपणा जलडों दगड़ जुड़ौ मैसूस करला।

प्रस्तुति – कान्ता घिल्डियाल
नेहरु नगर कॉलोनी, देहरादून

उपलब्धि

पतंजलि अनुसंधान संस्थान राष्ट्रीय स्तर पर दूसरी बार पुरस्कृत

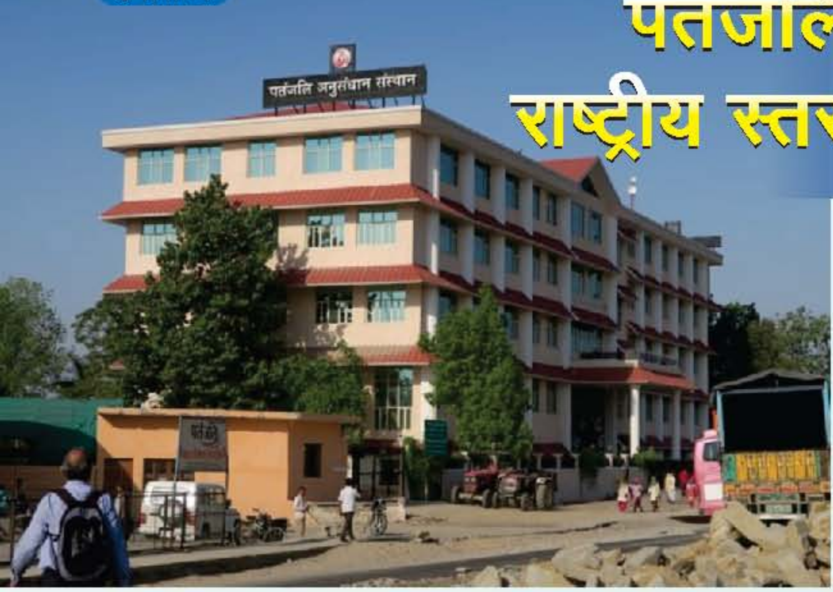

पतंजलि अनुसंधान संस्थान को डॉ.पी.डी.सेठी राष्ट्रीय एचपीटीएलसी पुरस्कार–2025 में प्राइवेट इंडस्ट्री श्रेणी में प्रथम पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। गत वर्ष भी संस्थान को यह पुरस्कार मिला था। यह प्रतिष्ठित पुरस्कार संस्थान को उनके **'आंवला के बीज तेल पर किए गए उत्कृष्ट शोध'** के लिए मिला,जिसमें शक्तिशाली एंटी–माइक्रोबियल और बायोफिल्म – रोधी गुणों को उजागर किया गया गया। पतंजलि के प्रमुख वैज्ञानिक डॉ.अनुराग वार्ष्णेय ने बताया कि डॉ. पी.डी.सेठी राष्ट्रीय एचपीसीएलसी पुरस्कार देश में एनालिटिकल केमिस्ट्री के क्षेत्र में उत्कृष्ट शोध को पहचान देने वाला प्रतिष्ठित मंच है। लगातार दूसरी बार यह पुरस्कार मिलना गर्व का विषय है और यह संस्थान की सुदृढ़ वैज्ञानिक आधारशिला परिचायक है। आंवला पर किए गए इन्हीं शोध के आधार पर भारतीय उद्योग परिसंघ की ओर से संस्थान को पिछले वर्ष 10वें अंतरराष्ट्रीय 'वेस्ट टू वर्थ' सम्मेलन में 'अवार्ड ऑफ मेरिट' से सम्मानित किया गया था।

प्रस्तुति–
प्रो. जानकी पंवार, सेवानिवृत्त प्राचार्य,
सदस्य सलाहकार मंडल साईं सृजन पटल

विजयश्री भोजपत्रलेखा

प्रयोगशाला से भोजपत्र तक

निकिता रावत के आत्मविश्वास की प्रेरक गाथा

उत्तराखंड की वादियाँ केवल प्राकृतिक सौंदर्य के लिए ही नहीं, बल्कि उन संघर्षशील कहानियों के लिए भी जानी जाती हैं जो भीतर से समाज को दिशा देती हैं। निकिता रावत की जीवन–यात्रा ऐसी ही एक प्रेरक गाथा है, जिसमें आधुनिक विज्ञान की प्रयोगशाला और भारतीय परंपरा के प्रतीक भोजपत्र का अद्भुत संगम दिखाई देता है। यह कहानी केवल व्यक्तिगत सफलता की नहीं, बल्कि आत्मखोज,

साहस, पारिवारिक सहयोग और सांस्कृतिक पुनर्जागरण का जीवंत उदाहरण है। गोपेश्वर की शांत भूमि में जन्मी निकिता ने प्रारंभ से ही जिज्ञासु और मेधावी छात्रा के रूप में अपनी पहचान बनाई। जीवन ने कम आयु में विवाह के रूप में एक चुनौतीपूर्ण मोड़ दिया, लेकिन यह मोड़ उनके सपनों की सीमा नहीं बना–बल्कि उनके विस्तार का आधार बन गया। उनके पति का सहयोग इस यात्रा में वह शक्ति बना, जिसने उन्हें शिक्षा और आत्मनिर्भरता की दिशा में आगे बढ़ने का अवसर दिया।

मेडिकल माइक्रोबायोलॉजी में परास्नातक की डिग्री प्राप्त कर उन्होंने चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में एक मजबूत पहचान बनाई। क्षय रोग जैसे गंभीर विषयों पर कार्य करना हो या **Cordyceps militaris** के कृत्रिम संवर्धन पर शोध उन्होंने हर क्षेत्र में अपनी वैज्ञानिक दक्षता का परिचय दिया। मेडिकल कॉलेजों, फार्मास्यूटिकल और कॉस्मेटिक क्षेत्रों में उनका अनुभव उन्हें एक स्थापित वैज्ञानिक के रूप में प्रतिष्ठित करता है। लेकिन जीवन का वास्तविक मोड़ कोविड –19 महामारी के दौरान आया। यह वह समय था जब पूरी दुनिया अस्थिर थी और व्यक्तिगत स्तर पर भी अनेक मानसिक चुनौतियाँ सामने आ रही थीं। इसी दौर में निकिता ने अपने भीतर झाँकने का साहस किया। निराशा को अवसर में बदलते हुए उन्होंने मशरूम उत्पादन जैसे छोटे लेकिन प्रभावशाली प्रयोग से अपने आत्मविश्वास को पुनर्जीवित किया। यहीं से उनकी यात्रा एक नए आयाम की ओर बढ़ती है–अपनी जड़ों की ओर लौटने की यात्रा। चमोली जिले के मलारी गाँव में लौटकर उन्होंने पहाड़ की

संस्कृति, परंपराओं और प्राकृतिक धरोहर को नए दृष्टिकोण से समझा। भोजपत्र, जो कभी भारतीय ज्ञान परंपरा का आधार था, उनके हाथों में पुनः जीवंत हो उठा। "विजयश्री भोजपत्रलेखा" के रूप में शुरू हुआ उनका प्रयास केवल एक कला नहीं, बल्कि सांस्कृतिक पुनर्जागरण का आंदोलन बन गया। उनके द्वारा निर्मित कलाकृतियाँ आध्यात्मिकता, प्रकृति और पहाड़ी जीवन के सौंदर्य को एक साथ प्रस्तुत करती हैं।

यह कार्य परंपरा और आधुनिकता के बीच एक सशक्त सेतु का निर्माण करता है।उनकी इस पहल को विभिन्न प्रतिष्ठित मंचों पर पहचान मिली। IIM काशीपुर के FIED में चयन, उत्तरायणी कौथिक महोत्सव 2026, उत्तिष्ठा 2026 और राजभवन देहरादून के बसंतोत्सव में सहभागिता–ये सभी उपलब्धियाँ उनके कार्य की प्रासंगिकता और प्रभाव को प्रमाणित करती हैं। यह दर्शाता है कि यदि प्रयास ईमानदार हो, तो एक छोटे कमरे से शुरू हुई पहल भी राज्य स्तर तक अपनी पहचान बना सकती है। इस पूरी यात्रा का सबसे भावनात्मक और प्रेरणादायक पक्ष है–उनका मातृत्व और पारिवारिक संतुलन। एक माँ के रूप में अपने बच्चों को समय देना और साथ ही अपने सपनों को जीना, यह संतुलन आसान नहीं होता। लेकिन उनके जीवन में परिवार का सहयोग उनकी सबसे बड़ी शक्ति बनकर उभरा। यह कहानी केवल निकिता रावत की नहीं है–यह उत्तराखंड की उन सभी बेटियों की कहानी है जो सीमित संसाधनों के बावजूद असीम संभावनाओं को साकार कर रही हैं। यह कहानी हमें यह सिखाती है कि आधुनिकता और परंपरा विरोधी नहीं, बल्कि पूरक हो सकती हैं। विज्ञान और संस्कृति का यह संगम ही भविष्य की सच्ची दिशा है। निकिता रावत की यात्रा हमारे समाज के लिए कई महत्वपूर्ण संदेश देती है। महिला सशक्तिकरण केवल नीतियों से नहीं, बल्कि अवसर और विश्वास से आता है। स्थानीय संसाधनों और पारंपरिक ज्ञान को नवाचार से जोड़कर आत्मनिर्भरता का मार्ग प्रशस्त किया जा सकता है। कठिन परिस्थितियाँ अंत नहीं होतीं, बल्कि नए आरंभ का संकेत होती हैं। निकिता रावत की यह प्रेरक गाथा हमें यह सोचने पर विवश करती है कि हम अपनी जड़ों से कितने जुड़े हैं। क्योंकि सच्चाई यही है।

"जब जड़ें मजबूत होती हैं,
तभी सपनों को आकाश मिलता है।"

प्रस्तुति :
अंकित तिवारी, उप संपादक

नीलमणि लता : सदाबहार फूलदार बेल

नीले रंग के फूलों वाली ये बेल– आजकल खूब फूल रही है। इसके पत्ते बेहद खुरदरे होते हैं। इस बेल के पत्ते जाड़ों में पूरी तरह से झड़ जाते हैं। इस प्रजाति का नाम वनस्पति विज्ञान के एक अंग्रेज संरक्षक रॉबर्ट जेम्स पेट्रे के सम्मान में रखा गया था। देहरादून और इसके आसपास की घाटियों में बसंत के बाद जैसे ही गर्मी का आगाज होता है कई घरों और बाग बगीचों के किनारे हमें नीलमणि, बोगनवेलिया, बिगोनिया आदि की बेलें फूलती हुई दिखाई देती हैं। ये बेहद आश्चर्य का विषय है और रोचक तथ्य है कि नीलमणि, कैट्सक्लॉ और लहसुनिया बेल तब सबसे ज्यादा फूलों से भरी रहती हैं जब उन पर कोई भी पत्ते नहीं होते हैं। आज हम रेगमाल जैसे खुरदरे पत्तों वाली बेल जिसे हम सैंडपेपर वाईन कहते हैं, का जिक्र कर रहे हैं। वर्बीनेसी परिवार की सदस्य यह नीलमणि बेल बैंगनी रंग के फूलों से भरी दिखती है। हालांकि कुछ स्थानों पर सफेद रंग के फूलों की बेल भी होती है। यह माना जाता है कि फूलों की यह बेल मुख्यतः अमेरिका के ट्रॉपिकल एरिया की निवासी है लेकिन इस बेल को प्राकृतिक रूप से उत्तर पूर्व मैक्सिको, बोलिविया, परागुवे और दक्षिण ब्राजील में भी देखा गया है।

उत्तराखण्ड में तराई के गर्म इलाकों के अलावा मसूरी की तलहटी, थानों के जंगल, एफ.आर.आई. देहरादून, मालदेवता और सहस्त्रधारा के जंगलों में भी बैंगनी रंग की पैट्रिया या नीलमणि को देखा जा सकता है। यह अलग बात है कि हमारे यहाँ उगने वाली जंगली पैट्रिया पर फूल बहुत कम लगते हैं। थोड़ा ऊँचाई वाले ठंडे इलाकों में यह बेल बहुत धीरे–धीरे बढ़ती है। इस बेल को सुप्तावस्था में अक्टूबर से दिसम्बर में काटकर कलमों से लगाया जा सकता है। ये बेल अधिकतर गर्म इलाकों में ज्यादा फैलती है। उत्तराखंड इसका मूल स्थान नहीं है ! जिसे हिंदी में नीलमणि लता या बैंगनी पुष्पांजलि कहा जाता है, वर्बेनेसी परिवार की एक शानदार सदाबहार फूलदार बेल है। यह 40 फीट तक लंबी हो सकती है और अपने लटकते हुए बैंगनी फूलों के गुच्छों (रानी की माला) के लिए जानी जाती है।

प्रस्तुति : जे.पी.मैठाणी

आयोजन

दून पुस्तक महोत्सव 2026
ज्ञान, संस्कृति और सृजन का जीवंत उत्सव

देहरादून का परेड ग्राउंड 4 से 12 अप्रैल 2026 तक केवल एक आयोजन स्थल नहीं, बल्कि विचारों, पुस्तकों और संस्कृति के विराट संगम का साक्षी बना। राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, शिक्षा मंत्रालय और उत्तराखंड सरकार के संयुक्त तत्वाधान में आयोजित 'दून पुस्तक महोत्सव 2026' ने यह सिद्ध कर दिया कि पुस्तकें केवल ज्ञान का माध्यम नहीं, बल्कि समाज की आत्मा होती हैं। मुख्यमंत्री पुष्कर सिंह धामी द्वारा भव्य शुभारंभ के साथ शुरू हुए इस नौ दिवसीय महोत्सव ने शुरुआत से ही अपनी व्यापकता का संकेत दे दिया था।

26 गढ़वाली–कुमाऊँनी पुस्तकों का लोकार्पण, 300 से अधिक स्टॉल्स पर लाखों पुस्तकों का प्रदर्शन और निःशुल्क प्रवेश इन सबने इसे जन–जन का उत्सव बना दिया। राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के अध्यक्ष मिलिंद सुधाकर मराठे द्वारा "पुस्तकें मन का व्यायाम हैं" जैसे विचारों ने इस आयोजन की बौद्धिक गंभीरता को और सुदृढ़ किया।

साहित्य और विचारों का महाकुंभ

'दून लिट फेस्ट' इस महोत्सव का बौद्धिक केंद्र बनकर उभरा, जहाँ साहित्य, इतिहास, समाज और समकालीन विषयों पर गहन विमर्श हुआ। जुपिंदर सिंह से लेकर बर्जिस देसाई, अद्वैत काला, कुलप्रीत यादव और आचार्य प्रशांत जैसे विचारकों ने अपने अनुभवों और शोध के माध्यम से श्रोताओं को नई दृष्टि दी। इम्तियाज अली के सत्र ने रचनात्मकता और सिनेमा के बीच संबंधों को उजागर किया, वहीं लेफ्टिनेंट जनरल सतीश दुआ और शुभांशु शुक्ला जैसे व्यक्तित्वों ने युवाओं को साहस, अनुशासन और सपनों की उड़ान का संदेश दिया। यह केवल संवाद नहीं, बल्कि जीवन के विविध आयामों को समझने का अवसर था।

बाल कोना : कल्पना और सृजन का संसार

इस महोत्सव का सबसे जीवंत और प्रेरणादायक पहलू रहा 'चिल्ड्रेन्स कॉर्नर', जहाँ प्रतिदिन सैकड़ों–हजारों बच्चों ने कहानियों, कला और रचनात्मक गतिविधियों के माध्यम से सीखने का नया अनुभव प्राप्त किया। कहानी सत्रों से लेकर '3Rs' (Reuse, Refuse, Recycle) जैसे पर्यावरणीय संदेश, 'डिजिटल इंडिया' पर पोस्टर प्रतियोगिता, ऐपण कला, कठपुतली निर्माण, क्लाउनिंग, थिएटर, और जीन मेकिंग जैसे विविध कार्यक्रमों ने बच्चों के भीतर छिपी प्रतिभा को निखारने का कार्य किया। यहाँ सीखना केवल किताबों तक सीमित नहीं रहा, बल्कि अनुभव, कल्पना और अभिव्यक्ति के माध्यम से बच्चों के समग्र विकास की दिशा में एक सशक्त प्रयास बना।

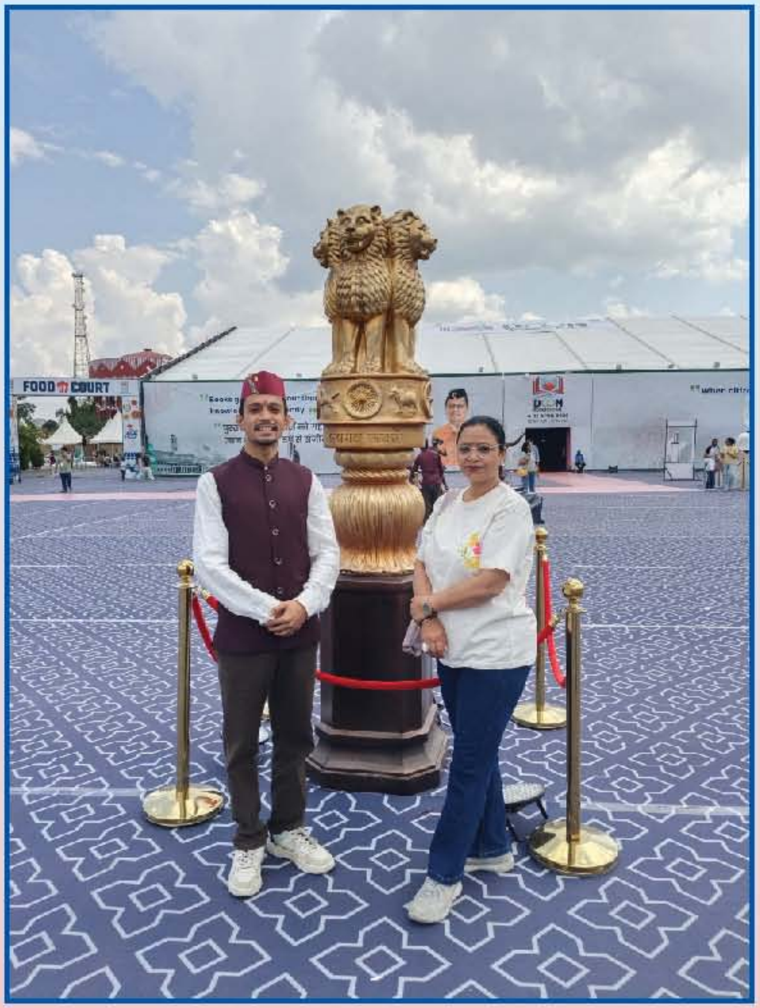

सांस्कृतिक संध्या : परंपरा और आधुनिकता का संगम

जहाँ दिन में विचारों का मंथन हुआ, वहीं शामें संस्कृति के रंगों से सराबोर रहीं। नरेंद्र सिंह नेगी की मधुर प्रस्तुतियों से लेकर 'वुमनिया बैंड', 'रहनुमा लाइव' और राजस्थान के मांगणियार कलाकारों की लोकधुनों ने दर्शकों को मंत्रमुग्ध कर दिया। इन प्रस्तुतियों ने यह संदेश दिया कि साहित्य और संगीत एक–दूसरे के पूरक हैं दोनों मिलकर समाज की संवेदनाओं को जीवंत रखते हैं।

एक उत्सव, जो आंदोलन बन गया

दून पुस्तक महोत्सव 2026 केवल एक आयोजन नहीं, बल्कि पढ़ने की संस्कृति को पुनर्जीवित करने का एक सशक्त आंदोलन बनकर उभरा। यहाँ पुस्तकों ने पीढ़ियों को जोड़ा, विचारों ने सीमाओं को तोड़ा और संस्कृति ने दिलों को एक किया। यह महोत्सव इस बात का प्रमाण है कि जब सरकार, संस्थाएँ और समाज मिलकर प्रयास करते हैं, तो ज्ञान का प्रकाश दूर–दूर तक फैलता है। उत्तराखंड की धरती पर आयोजित यह आयोजन अब केवल एक क्षेत्रीय उत्सव नहीं, बल्कि वैश्विक साहित्यिक पहचान की ओर बढ़ता हुआ एक सशक्त कदम है। आने वाले वर्षों में यह महोत्सव न केवल पाठकों और लेखकों के लिए प्रेरणा का स्रोत बनेगा, बल्कि नई पीढ़ी को ज्ञान, संवेदना और सृजनशीलता की ओर अग्रसर करने का माध्यम भी बनेगा।

प्रस्तुति : अंकित तिवारी, उपसंपादक

उत्तराखंड में लैंटाना का आक्रामक विस्तार

उत्तराखंड, जिसे अपनी समृद्ध जैव विविधता, घने वन और हिमालयी पारिस्थितिकी के लिए जाना जाता है, आज एक गंभीर पर्यावरणीय संकट का सामना कर रहा है। यह संकट है–लैंटाना *(Lantana)* नामक आक्रमणकारी विदेशी पौधे का तेजी से फैलाव। देखने में सुंदर और रंग–बिरंगे फूलों वाला यह पौधा वास्तव में "हरी आपदा" के रूप में उभर चुका है, जो राज्य के वन पारिस्थितिकी तंत्र को गहराई से प्रभावित कर रहा है। यह केवल एक वानस्पतिक समस्या नहीं, बल्कि पारिस्थितिकी, आजीविका और नीति–तीनों के लिए चुनौती है।

भारत में लैंटाना की आठ प्रजातियां पाई जाती हैं।लैंटाना एक बहुगुणसूत्री जटिल समूह है और यह मूल रूप से मध्य और दक्षिण अमेरिका का पौधा है। इसको 1807 ई में भारत में राष्ट्रीय वनस्पति उद्यान में एक सजावटी पौधे के रूप में लाया गया था और उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में कलकत्ता में एक सजावटी बाड़ पौधे के रूप में उपयोग किया गया था। लेकिन बाद में यह पौधा सड़कों के किनारों, रेलवे पटरियों, फसल के खेतों की मेड़ों और खुले वनों सहित देश भर के सभी खुले क्षेत्रों में फैल गया। अब यह पूरी तरह से प्राकृतिक रूप से स्थापित हो चुका है और पूरे भारत में पाया जाता है। इसे दुनिया की सबसे खतरनाक आक्रामक प्रजातियों में गिना जाता है, क्योंकि यह तेजी से फैलता है और स्थानीय वनस्पतियों को प्रतिस्थापित कर देता है। इसकी विशेषता यही है कि यह विपरीत परिस्थितियों में भी जीवित रह सकता है। जहाँ–जहाँ लैंटाना का विस्तार हुआ है, वहाँ स्थानीय पौधों की विविधता में गिरावट देखी गई है। यह प्रवृत्ति हिमालयी पारिस्थितिकी के लिए खतरनाक संकेत है, क्योंकि यहाँ की जैव विविधता पहले से ही जलवायु परिवर्तन और मानवीय हस्तक्षेप के दबाव में है। उत्तर–पश्चिमी हिमालयी क्षेत्र में लैंटाना कमारा *(L. camara)* को 1905 में नैनीताल जिले के काठगोदाम में पुरःस्थापित कराया गया था। गढ़वाल हिमालय में भी दो प्रजातियाँ – लैंटाना कमारा *(L. camara)* और लैंटाना इंडिका *(L. indica)*, उप–पर्वतीय और पर्वतीय क्षेत्रों के सभी आवासों में 2000 मीटर ऊँचाई तक प्रचुर मात्रा में पाई जाती हैं।

लैंटाना एक आक्रामक पौधा है जो फैलकर स्थानीय वनस्पतियों को समाप्त कर देता है, जिससे जैव विविधता घटती है और वन संरचना एकरूप हो जाती है। जब वनस्पति बदलती है तो उस पर निर्भर जीव–जंतु भी प्रभावित होते हैं। कई कीट, पक्षी और शाकाहारी जीव जो विशिष्ट पौधों पर निर्भर होते हैं वे या तो पलायन कर जाते हैं या उनकी संख्या घटने लगती है। इस प्रकार जैव–विविधता की पूरी श्रृंखला कमजोर पड़ती है। प्रचुर मात्रा में बीज उत्पादन और उनका पक्षियों द्वारा प्रभावी प्रसार लैंटाना को विशेष रूप से आक्रामक बनाते हैं। लैंटाना की पत्तियों और बीजों में टर्पीनॉइड पाए जाते हैं जिसके कारण यह जानवरों के लिए हानिकारक होता है।

यह झाड़ी अपने मजबूत जड़ तंत्र की सहायता से फैलती जाती है। इसके घने झाड़ जंगलों की संरचना को बदल देते हैं, जिससे वन्यजीवों के लिए प्राकृतिक आवास और भोजन की उपलब्धता प्रभावित होती है। शाकाहारी जीवों के लिए चारा कम होता है, और उनके व्यवहार में बदलाव आता है। इसका असर खाद्य श्रृंखला पर पड़ता है, जो अंततः पूरे पारिस्थितिकी तंत्र को असंतुलित कर देता है। यह संकट सामाजिक और आर्थिक आयाम भी रखता है। उत्तराखंड के ग्रामीण समुदाय वनों पर चारे, ईंधन और अन्य वनोपज के लिए निर्भर हैं। लैंटाना के

फैलाव से ये संसाधन सीमित हो रहे हैं। कई क्षेत्रों में यह कृषि भूमि के आसपास भी फैल रहा है, जिससे फसलों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार से यह समस्या पर्यावरणीय होने के साथ–साथ आजीविका का संकट भी बनती जा रही है।

लैंटाना की एक और चिंता का विषय इसकी "एलिलोपैथिक" प्रकृति है, यानी यह मिट्टी में ऐसे रसायन छोड़ता है जो अन्य पौधों के अंकुरण और वृद्धि को बाधित करते हैं। इससे जंगलों का प्राकृतिक पुनर्जनन रुक जाता है। परिणामस्वरूप, एक बार प्रभावित क्षेत्र लंबे समय तक उसी आक्रामक प्रजाति के नियंत्रण में रहता है। इसके अलावा, सूखे मौसम में लैंटाना जंगल की आग को और अधिक खतरनाक बना देता है। इसकी घनी और सूखी झाड़ियाँ आग को तेजी से फैलाने में मदद करती हैं, जिससे वनाग्नि की घटनाएँ बढ़ने का खतरा रहता है,जो पहले से ही हिमालयी पारिस्थितिकी के लिए संवेदनशील मुद्दा है। लैंटाना में कई ऐसे गुण होते हैं जो आग को आकर्षित करते हैं। आग का लैंटाना की वृद्धि पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। इससे न केवल इस प्रजाति की पुनः अंकुरण क्षमता बढ़ती है, बल्कि बीजों की निष्क्रियता भी टूटती है और बड़े पैमाने पर वृद्धि में सहायता मिलती है। आग से प्रभावित लैंटाना अधिक तीव्रता से पुनर्जीवित होता है।

लैंटाना की घनी झाड़ियां गुलदारों जैसे शिकारी जीवों को छिपने का सुरक्षित स्थान भी देती हैं। ऐसे में ये जानवर बिना दिखे मानव बस्तियों के बेहद करीब आ सकते हैं। इससे अचानक हमलों और पशुधन के शिकार की घटनाएं बढ़ती हैं। जिम कॉर्बेट ने अपनी पुस्तक "मैन इटर्स ऑफ कुमाऊं" में कुमाऊँ की तराई में गुलदारों के छिपने के स्थान के रूप में लैंटाना की झाड़ियों के घने झुरमुटों का उल्लेख किया है। लैंटाना का प्रसार केवल एक वानस्पतिक समस्या नहीं, बल्कि एक सामाजिक और पर्यावरणीय संकट है। इसे नियंत्रित करना केवल वन विभाग की जिम्मेदारी नहीं, बल्कि सामूहिक प्रयास की मांग करता है–तभी मानव और वन्यजीवों के बीच संतुलन संभव है।

इसके सकारात्मक पक्षों में औषधि और कीट प्रतिरोधकों में इसका औद्योगिक उपयोग अत्यधिक संभावनाशील है। अन्य उपयोगों में, जैव–ऊर्जा के लिए इसकी विशाल जैव द्रव्य (बायोमास) उत्पादन क्षमता,

फर्नीचर के लिए मजबूत डंडियाँ, टोकरी बनाना तथा पारंपरिक भंडारों में कीट प्रतिरोधक के रूप में उपयोग शामिल हैं। लैंटाना के फूलों के आसपास तितलियों की अच्छी विविधता देखी जा सकती है, क्योंकि यह प्रजाति मुख्यतः तितलियों द्वारा परागित होती है। यह कहा जा सकता है कि इसके सकारात्मक प्रभाव और आर्थिक उपयोग भी हैं, लेकिन यह ध्यान रखना होगा कि उपयोग के नाम पर इसके प्रसार को अनजाने में बढ़ावा न मिले। अंततः, लैंटाना का आक्रामक विस्तार हमें यह याद दिलाता है कि पारिस्थितिकी तंत्र कितने संवेदनशील होते हैं और बाहरी हस्तक्षेप किस तरह दीर्घकालिक समस्याएँ पैदा कर सकता है। उत्तराखंड जैसे पारिस्थितिक रूप से नाजुक राज्य में यह और भी गंभीर विषय है। अब समय आ गया है कि इस "हरी आपदा" को केवल एक वानस्पतिक समस्या मानकर नजरअंदाज न किया जाए, बल्कि इसे एक व्यापक पर्यावरणीय संकट के रूप में देखा जाए। यदि समय रहते ठोस और समन्वित कदम नहीं उठाए गए, तो उत्तराखंड की प्राकृतिक धरोहर पर इसका प्रभाव स्थायी और अपरिवर्तनीय हो सकता है।

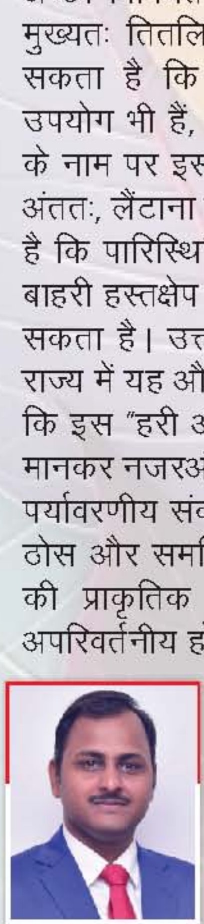

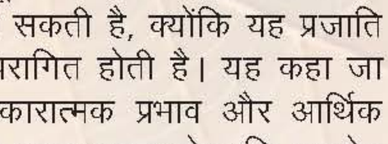

प्रस्तुति : डॉ. इंद्रेश कुमार पाण्डेय
असिस्टेंट प्रोफेसर (वनस्पति विज्ञान),
डॉ. शिवानंद नौटियाल राजकीय स्नातकोत्तर
महाविद्यालय, कर्णप्रयाग

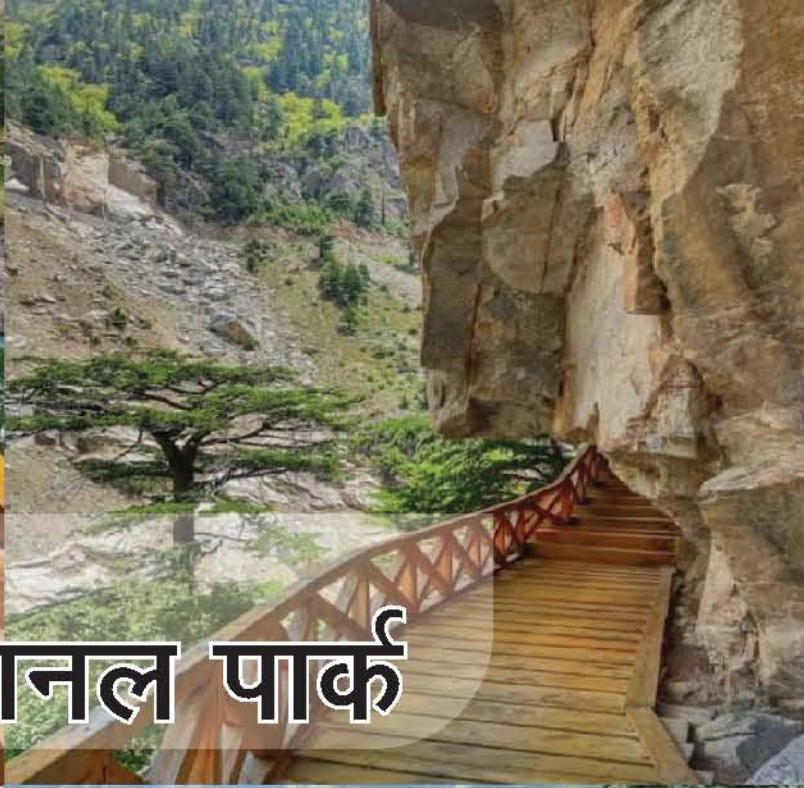

पर्यटकों के लिए खुला
गंगोत्री नेशनल पार्क

वन विभाग ने एक अप्रैल को पारंपरिक रीति–रिवाजों के बाद अगले छह महीनों के लिए गंगोत्री नेशनल पार्क का प्रवेश औपचारिक रूप से पर्यटकों के लिए खोल दिया है। उप निदेशक हरीश नेगी ने गोमुख ट्रेक के कनखू बैरियर गेट को खोलने से पहले पूजा–अर्चना की। इसके बाद नेलांग घाटी और गर्तांग गली में भी प्रवेश की अनुमति दे दी गई। अब पर्यटक गौमुख–तपोवन, केदारताल, नेलांग घाटी और अन्य ट्रेकिंग मार्गों का अन्वेषण कर सकते हैं, साथ ही ऐतिहासिक गर्तांग गली भी देख सकते हैं। यह उल्लेखनीय है कि गंगोत्री नेशनल पार्क में गंगोत्री ग्लेशियर, दुनिया की कई ऊँची चोटियाँ और भारत–चीन सीमा का विस्तृत क्षेत्र शामिल है। पार्क के खुलने के साथ नेलांग और जादुंग घाटियाँ, जिन्हें अक्सर 'लिटिल लद्दाख' कहा जाता है, अब पर्यटकों के लिए सुलभ हैं।

यहाँ बंजर ऊँचे पहाड़ों और अनोखी भौगोलिक संरचनाओं के साथ ट्रांस–हिमालयी भूभाग की झलक मिलती है। गर्तांग गली, जो एक अद्भुत इंजीनियरिंग संरचना और भारत–तिब्बत व्यापार संबंधों का साक्ष्य है, 1962 के भारत–चीन युद्ध के बाद सुरक्षा कारणों से बंद कर दी गई थी। इसे 2021 में पुर्नस्थापित कर फिर से खोला गया और तब से यह रोमांच चाहने वाले पर्यटकों के लिए पसंदीदा स्थान बन गया है। गौमुख–तपोवन ट्रेक पार्क के सबसे लोकप्रिय मार्गों में से एक है, जो 18 से 22 किलोमीटर तक फैला है और गंगा के उद्गम स्थल गौमुख तक ले जाता है, जहाँ स्नान और धार्मिक अनुष्ठानों का विशेष महत्व है। नाजुक पारिस्थितिकी तंत्र को सुरक्षित रखने के लिए प्रतिदिन केवल 150 ट्रेकर्स को प्रवेश की अनुमति है। गंगोत्री से शुरू होकर 4,750 मीटर की ऊँचाई पर स्थित केदारताल झील तक जाने वाला केदारताल ट्रेक बर्फ से ढकी चोटियों के मनमोहक दृश्य प्रस्तुत करता है और चुनौतीपूर्ण होने के बावजूद अत्यंत रोमांचक माना जाता है। चीन सीमा के निकट स्थित नेलांग घाटी अपने लद्दाख जैसे परिदृश्य के लिए जानी जाती है और बाइक अभियानों के लिए लोकप्रिय हो रही है। कालिंदीखाल ट्रेक, जो दुनिया के सबसे कठिन ट्रेक में गिना जाता है, गंगोत्री को बद्रीनाथ से जोड़ता है और इसमें 5,950 मीटर ऊँचे कालिंदी खाल दर्रे को पार करना पड़ता है। पार्क के दोबारा खुलने से रोमांच, आध्यात्मिकता और प्राकृतिक सौंदर्य का अनुभव करने के इच्छुक पर्यटकों के लिए हिमालय की भव्यता का आनंद लेने का अवसर मिलेगा।

प्रस्तुति : अमन तलवाड़, सह संपादक

सुद्धोवाला जेल के कैदियों के जीवन पर आधारित डाक्यूमेंट्री फिल्म 'सेकंड चांस' को मिला राष्ट्रीय सम्मान

सुद्धोवाला जेल (देहरादून) पर आधारित डॉक्यूमेंट्री फिल्म 'सेकंड चांस' को राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (NHRC) की प्रतिष्ठित 'ह्यूमन राइट्स शॉर्ट फिल्म प्रतियोगिता' में राष्ट्रीय पुरस्कार मिलना केवल एक फिल्म की सफलता नहीं, बल्कि मानवता, पुनर्वास और न्याय की नई व्याख्या का प्रतीक है। देशभर से आई 526 प्रविष्टियों और 24 भाषाओं के बीच कठोर तीन–चरणीय चयन प्रक्रिया के बाद जब केवल सात फिल्मों को सम्मानित किया गया, तो उसमें 'सेकंड चांस' का शामिल होना उत्तराखंड के लिए गर्व का क्षण बन गया। युवा फिल्मकार शुभम शर्मा और रवि कर्णवाल की यह उपलब्धि बताती है कि सीमित संसाधनों के बावजूद यदि दृष्टि स्पष्ट और उद्देश्य सशक्त हो, तो रचनात्मकता किसी भी सीमा को पार कर सकती है। नई दिल्ली में आयोजित समारोह में NHRC के अध्यक्ष न्यायमूर्ति वी. रामसुब्रमण्यन, सदस्य न्यायमूर्ति (डॉ.) बिद्युत रंजन सारंगी और सदस्य श्रीमती विजया भारती सयानी की उपस्थिति में यह सम्मान प्रदान किया गया। यह सम्मान केवल फिल्मकारों के लिए नहीं, बल्कि उन अनगिनत कैदियों के जीवन–संघर्ष और उम्मीदों का भी सम्मान है, जिनकी कहानी इस डॉक्यूमेंट्री में उभरकर सामने आई है।

'सेकंड चांस' की सबसे बड़ी ताकत इसकी संवेदनशीलता है। जेल के भीतर कैदियों के जीवन, उनके मनोभाव, उनके पुनर्वास की संभावनाओं और सबसे महत्वपूर्ण उनके मानवाधिकारों की पड़ताल इस फिल्म को एक सामाजिक दस्तावेज का रूप देती है। यह प्रश्न उठाती है कि क्या समाज वास्तव में अपराध करने वाले व्यक्ति को दूसरा अवसर देने के लिए तैयार है, या वह हमेशा के लिए उसे उसके अतीत में कैद कर देता है ? फिल्म के निर्माण में निर्देशक हर्षित मिश्रा, DOP निवान प्राचुर्या और निर्माता दीपा धामी का योगदान उल्लेखनीय है। दीपा धामी, जो विधि (LLB) की पृष्ठभूमि से आती हैं, ने सामाजिक न्याय और मानवाधिकारों की अपनी समझ को इस फिल्म में गहराई से पिरोया है। शुभम शर्मा, जो NSD और FTII पुणे से प्रशिक्षित हैं और 'कश्मीर फाइल्स' तथा 'बधाई दो' जैसी फिल्मों में अभिनय कर चुके हैं, ने निर्देशन और प्रोडक्शन में भी अपनी अलग पहचान बनाई है। वहीं, रवि कर्णवाल, जो पद्मश्री निरंजन गोस्वामी के शिष्य हैं, एक प्रशिक्षित अभिनेता, लेखक और अभिनय कोच के रूप में अपनी प्रतिभा का लोहा मनवा चुके हैं। दोनों की संयुक्त रचनात्मकता ने 'अलार्मघड़ी', 'चप्पल', 'डस्टर' और 'अल्पविराम' जैसी लघुफिल्मों के माध्यम से पहले ही 50 से अधिक राष्ट्रीय पुरस्कार अर्जित किए हैं।

शुभम और रवि का यह कथन "यह पुरस्कार हमें नहीं, उन हजारों कैदियों को मिला है जिनकी जिंदगी को हमने अपनी फिल्म में दिखाने की कोशिश की" इस पूरी यात्रा का सार प्रस्तुत करता है। रुड़की और उत्तराखंड की गलियों से निकलकर नई दिल्ली के NHRC सभागार तक पहुंची यह यात्रा हर उस युवा के लिए प्रेरणा है, जो बड़े सपने देखने का साहस रखता है। 'सेकंड चांस' केवल एक फिल्म नहीं, बल्कि एक सामाजिक आंदोलन की शुरुआत है, जो हमें यह सोचने पर मजबूर करती है कि न्याय केवल सजा नहीं, बल्कि सुधार और पुनर्वास का अवसर भी होना चाहिए।

प्रस्तुति – प्रो.(डॉ.) के.एल.तलवाड़

राष्ट्रीय राजमार्ग बद्रीनाथ पर कमेडा भूस्खलन क्षेत्र

ऋषिकेश—बद्रीनाथ हाईवे (NH-07) पर चार धाम परियोजना के तहत हुए चौड़ीकरण कार्यों के कारण भूस्खलन एवं भूधंसाव के क्षेत्र काफी बढ़ गए हैं। पहाड़ों की अनियोजित कटाई, मलबे का गलत निस्तारण और नाजुक हिमालयी पारिस्थितिकी तंत्र के साथ छेड़छाड़ से भारी बारिश के दौरान मार्ग बन्द हो जाते हैं, जिससे आमजनमानस एवं तीर्थयात्री जगह जगह–जगह फंस जाते हैं। ऋषिकेश – बद्रीनाथ राष्ट्रीय राजमार्ग पर 23 से अधिक भूस्खलन और भूधंसाव क्षेत्र (Landslide Zone) चिन्हित किए गए हैं। बद्रीनाथ राष्ट्रीय राजमार्ग पर कमेडा से सोनला तक सात से अधिक भूस्खलन एवं भूधंसाव प्रभावित जोन हैं। गौचर के पास कमेडा प्रथम एवं पेट्रोल पंप के पास द्वितीय भूस्खलन एवं भूधंसाव का सबसे अधिक प्रभावित करने वाला क्षेत्र बना हुआ है। कर्णप्रयाग के पास उमट्टा धार,जयकंडी,जिलासू पुल,लंगासू से देवलीबगड़ और बेडाणू कस्बे जैसे कई संवेदनशील स्थान चुनौतीपूर्ण क्षेत्र हैं।

बद्रीनाथ राष्ट्रीय राजमार्ग पर कमेडा (चमोली) सहित अन्य संवेदनशील स्थानों पर भूस्खलन को रोकने के लिए एनएचआईडीसीएल (NHIDCL) आधुनिक तकनीकों का उपयोग कर रहा है। इसमें मुख्य रूप से कमेडा एवं अन्य संवेदनशील क्षेत्रों में इन तकनीकों का

उपयोग किया जा रहा है, जिनमें पहाड़ी को लोहे की जाली से बांधना (Mesh Covering) भी है। इस ट्रीटमेंट तकनीक में कमेडा में पहाड़ी के कमजोर हिस्सों को लोहे की जाल से ढककर चट्टानों को गिरने से रोका जा रहा है। सॉइल नेलिंग (Soil Nailing) और रॉक बोल्टिंग (Rock Bolting)– यह आस्ट्रेलियाई तकनीक है – जो कि इस क्षेत्र के भूस्खलन क्षेत्र में ढीली मिट्टी और चट्टानों को मजबूत करने के लिए उपयोग की जा रही है , जो भूस्खलन को रोकने में लगभग 90 प्रतिशत प्रभावी है। हाइड्रोसीडिंग (Hydroseeding) तकनीक से लगातार भूस्खलन वाले क्षेत्रों में मिट्टी को स्थिर करने के लिए इस तकनीक का प्रयोग करके मलबे को स्थिर किया जा रहा है। रैनो मैट्रेस (Reno Mattress) और जियोटेक्सटाइल (Geotextiles) तकनीकी द्वारा ढलान की स्थिरता और जल निकासी के लिए इनका प्रयोग किया जा रहा है कमेडा में पेट्रोल पंप के पास,जहां पर अत्यधिक भूधंसाव हो रहा है,वहां पर इस तकनीक का प्रयोग किया जा रहा है। इन उपायों का उद्देश्य राष्ट्रीय राजमार्ग को वर्षा एवं आगामी चारधाम यात्रा के समय आमजनमानस के लिए सुगम एवं सुरक्षित बनाना है।

प्रस्तुतिः
डॉ. रमेश चन्द्र भट्ट विभागाध्यक्ष भूगोल, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय कर्णप्रयाग

वन्यजीव फोटोग्राफी : पर्यावरण संरक्षण का संदेश

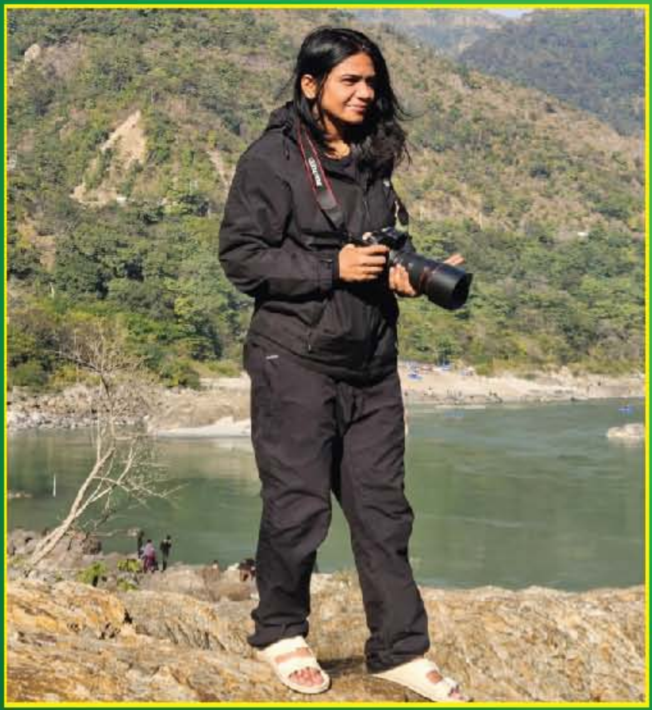

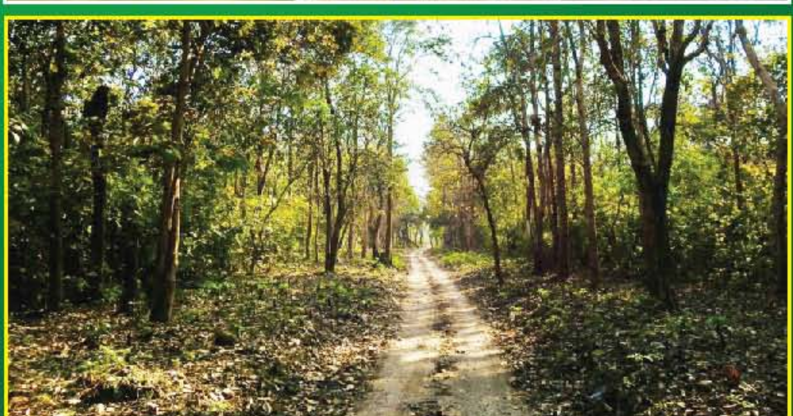

चाहत चौधरी, पीएच.डी. स्कॉलर, औषधि विज्ञान विभाग,
एम्स ऋषिकेश